* श्रीः *

विश्वामित्र ।

(सचित्र पौराणिक नाटक

लेखक :—

पाप परिणाम, सती-चिन्ता, कृष्ण-सुदामा, प्रभृति नाटकोंके रचयिता—

बाबू जमुनादास मेहरा ।

प्रकाशक :—

रिखबदास बाहिती,

नं० ७४, बड़तल्ला स्ट्रीट,

कलकत्ता ।

प्रथमवार २०००]　　१९२१　　[मूल्य १) रुपया ।

प्रकाशक—
रिखबदास बाहिती,
आर० डी० बाहिती एण्ड को०
नं० ७४, बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता।

मुद्रक—
रिखबदास बाहिती
"दुर्गा प्रेस"
नं० ७४, बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

नाटक।

—:※:—

दृश्य पहला।

——:——

(स्थान—विष्णु-लोक)

बीचमें एक रत्न जटित ऊँचा सिंहासन रखा है। जिसकी दाहिनी ओर बाँई ओर हाथमें चँवर लिये दो अप्सरायें हाथ जोड़कर खड़ी हैं, सिंहासनके सम्मुख ब्रह्मा, और नारदमुनि तथा शङ्कर हाथ जोड़े विष्णु-स्तुति कर रहे हैं।

(गायन)

जगदीश्वर त्राता त्राता, तू है निर्विकार साकार ॥
शेष रटत सुरेश रटत, पावत नहिं कोउ पार ॥ जगदीश्वर०॥
तारण तरण अशरण शरण, तोरी महिमा अपार ।
दरश देहु प्रभु ! मनस कामना तव पूरण करनार ॥ जगदीश्वर ॥

गायन समाप्त होते ही एक शब्दके साथ ही साथ चारों ओर दिव्य प्रकाश फैल जाता है। चतुर्भुज रूपमें विष्णु भगवान सिंहासन पर बैठे हुए दिखाई देते हैं सब सीस झुकाते हैं। अप्सरायें चँवर डुलाने लगती हैं।

विष्णु—(मुसकराकर) ओहो ! आज तो मेरे भाग्योदय हुए हैं जो सब शक्तियोंने एक साथ ही दर्शन दिया है। कहिये, कहिये, आज मुझपर इतना अनुग्रह क्यों ?

शंकर—प्रभो ! ये उपमायें आपहीको शोभा देती हैं। हम सेवकोंका इतना मान हमारे लिये गौरवका कारण है।

विष्णु—नहीं नहीं, आपहीकी शक्तियोंका मुझे अभिमान है, आपका सामर्थ्य महान है।

ब्रह्मा—जगदीश्वर ! ऐसा न कहिये, आपहीके बलसे हम बलवान हैं, आपहीके बनाये प्रधान हैं।

ब्रह्मा—सत्य तो यह है, कि आपकी महिमासे अज्ञान हैं।

नारद—किसमें शक्ति है जो आपकी लीलाका बखानकर सके ! :-

शेष सुरेश महेश थके चतुरानन तव नित ध्यान लगाया।
योग किया सहयोग किया व्रत दान ध्यान तप यज्ञ रचाया ॥

मान किया बहुज्ञान किया, गुणगान किया निरखन तव माया।
गाय थके महिमा तुमरी, पर अन्त नहीं तुमरा प्रभु पाया॥

विष्णु—(मुसकराकर) देवर्षि! ये दोनों शक्तियां तो मेरी ही भुजाएँ हैं, मैं इनको स्मरण करता हूँ और ये मेरा मान बढ़ाती हैं:—

शक्ति इनकीसे हूँ मैं, मम शक्तिमें यह लीन हैं।
एक हैं अन्दरसे केवल देखनेमें तीन हैं॥

परन्तु यह तो बताइये, कि आज सब मिलकर मेरी बड़ाई करने पर ही क्यों तुले हुए हैं? क्या कोई नयी लीला दिखानेका विचार है? कहिये, क्या समाचार है?

नारद—क्या समाचार सुनाऊँ? प्रभो! नर-लोकमें तो अब कोई तप जपका नाम ही नहीं लेता, जिसको इच्छा होती है वह वशिष्ठ मुनिसे अपना यज्ञ कार्य सम्पादन करा कराकर, अपनी मनोकामना पूर्ण कर लेता है। आपने तो अब सबके लिये सहज ही उपाय रख दिया है। यदि ऐसा ही करना है, तो हम सब अपनी मनोकामना पूर्ण करनेके लिये स्वर्गमें रहकर कठोर व्रत क्यों करें?

विष्णु—आपका प्रश्न उचित ही है, मृत्यु लोकमें अवश्य ही तपोबलका प्रचार अधिकतासे होना चाहिये।

शंकर—परन्तु करन-कारण तो आप ही हैं, इसका उपाय आपके अतिरिक्त और कौन कर सकता है?

आप सबमें श्रेष्ठ हैं, कर्त्तव्यके अवतार हैं ।
आप चौदह लोकके कर्त्ता हैं, जग आधार हैं ॥
आपकी इच्छासे होता है भला ब्रह्माण्डका ।
कर्मकी नौका है हम, और आप खेवनहार हैं ॥

विष्णु—फिर भी आपहीलोगोंके बलसे मैं बलवान हूँ । चिन्तित न होइये, वह समय निकट ही है कि मनुष्यलोकमें तपोबलका प्रचार करनेके लिये कन्नौजाधिपति विश्वामित्र कर्म-क्षेत्रमें अग्रसर होगा ।

नारद—धन्य हो, धन्य हो ।

ब्रह्मा—जगदीश्वर ! आप ही हमारा मान रखनेको, त्रैलोक्यमें देवताओंका अभिमान रखनेको, भले और बुरेके परखनेको सदा ही तत्पर रहते हैं ।

नारद—सर्वलोककी भलाई आप न करेंगे तो और कौन करेगा ?

(गायन)

पूरण प्रभु आप ही, जगत् करता दुःख हरता, भक्तन भरता ॥ पूरण० ॥
तू है स्वामी अन्तरयामी कोऊ न पावे पार ।
तेरी महिमा अपार, निर्विकार ओंकार ।
तू सुख करता ॥ पूरण० ॥

(ब्रह्मा, शंकर तथा नारद हाथ जोड़े खड़े रहते हैं)

———

दृश्य दूसरा ।

—:*:—

(स्थान—जंगलका मार्ग)

(महाराज विश्वामित्र, जमदग्नि, सेनापति, आनन्दी तथा सैनिकोंका प्रवेश)

विश्वा०—अहा! यह ऋषि मुनियोंका तपोवन कैसा उद्दीयमान है? मानो शोभा और सौन्दर्यकी खान है। ब्रह्मर्षि वशिष्ठके आश्रमका अद्भुत प्रकाश देखकर चित्त आनन्द सागरमें गोते लगा रहा है।

आनन्दी—महाराज आपको तो प्रसन्नता हो ही रही है, परन्तु इस सुन्दर काननमें आकर मेरी क्षुधा भी चौगुनी बढ़ गई है।

विश्वा०—(हंसकर) मिश्रजी! यदि तुमारी क्षुधा बढ़ गयी है तो इतना भोजन कहांसे प्राप्त होगा?

आनन्दी—भोजनकी चिन्ता नहीं, वशिष्ठ मुनिके प्रतापसे एक ही दिन तीन तीन दिनका भोजन प्राप्त हो जाता है। भगवान जाने उनकी साधारण कुटिमें इतना पदार्थ कहांसे आता है?

सेनापति—महाराज! यह देखकर तो मुझे भी आश्चर्य हो रहा है, कि वशिष्ठ मुनि आपका सत्कार और इतना उत्तम प्रबन्ध किस दैवी शक्ति द्वारा करते हैं! आपके संग आये

हुए एक विशाल जन-समूहके लिये इतनी सामग्री एकत्रित करना कोई सामान्य कार्य नहीं है।

विश्वा०—वास्तवमें यह विषय विचारणीय है, मैंने भली भाँति विचार कर देखा है, कि उनकी अद्भुत शक्ति द्वारा ही खाद्य पदार्थ कुटियें उपस्थित रहते हैं, मैंने कभी किसी को सामग्री एकत्रित करते अथवा भोजन बनाते नहीं देखा। मैं इस विषयपर आज कार दिनसे लक्ष करता हूँ, परन्तु समझमें नहीं आता, कि यह उनकी क्या लीला है? जहांतक मैं देखता हूँ, उससे तो यही विदित होता है, कि महात्मा वशिष्ठमें कोई दैवी शक्ति है। अहा! तपोबलका भी कैसा प्रभाव है?

(नारद मुनि गाते हुए प्रवेश करते हैं। सब सीस झुकाते हैं।)

(गायन)

भज मन नारायण रस वाणी ॥
काहे भटकत प्राणी! ॥ भज मन० ॥
नारायणको नाम निरंजन, गुण गावें नित ज्ञानी ॥ भज० ॥
मायामें क्यों भरम रहा है! बीत चली है जवानी ॥ भज० ॥

कल्याण हो कल्याण हो। महाराज विश्वामित्रजी! देखा वशिष्ठ मुनिका तपोबल!

विश्वा०—देखा देवर्षि! भली प्रकार देखा। भगवन्! आप तो भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालका हाल जानते हैं। घट घटकी धारणाको पहचानते हैं, कृपाकर मेरी शंका

दूर करिये, कि वशिष्ठमुनि किस प्रकारसे मेरे संग आये हुए जन समूहका अतिथि सत्कार कर रहे हैं ?

नारद--यह सब शक्ति ब्रह्मर्षि वशिष्ठकी आराध्य देवी "कामधेनु" की है, जिसके प्रतापसे वह असम्भवको भी सम्भव कर सकते हैं, वह उस "यज्ञ धेनु" से इच्छित कामना पूर्णकर सकते हैं। उनके सम्मुख राज्यका सुख और सम्पत्ति तुच्छ है. उनका समाचार क्या पूछते हैं !

(नारद मुनिका उपरोक्त पद गाते हुए प्रस्थान)

विश्वा०--जमदग्नि !

जमदग्नि--(हाथ जोड़कर) महाराज !

विश्वा०--मेरे विचारमें यदि वह "कामधेनु" मुझे प्राप्त हो तो अति उत्तम है।

सेनापति--वह देखिये, वशिष्ठ मुनि पधार रहे हैं, आपके कहनेसे ही वह आपको प्रदान कर देंगे।

(वशिष्ठ मुनिका प्रवेश करना। सबका सीस झुकाना)

वशिष्ठ--कल्याण हो, कल्याण हो। राजन् ! चलिये और कृपा पूर्वक भोजनादिसे निवृत्त होकर तब वन-भ्रमणकी ओर अग्रसर होइये।

विश्वा०--ब्रह्मर्षि ! आपकी पूर्ण दयालुतासे सेवक धन्य हुआ, केवल वन-भ्रमणकी इच्छासे शरणागत हो, मैंने आपको बड़ा ही कष्ट दिया।

वशिष्ठ--नृपश्रेष्ट ! आप हमारे अधीश्वर हैं, आपहीकी रक्षासे

यह तपोवन स्वर्गके समान उज्वल रहता है, आप ही के प्रतापसे ऋषि मुनिगण निर्भय होकर ईश्वर आराधना करते हुए आपको आशीर्वाद देते हैं, यदि आप पधारे तो हमारे लिये सौभाग्यका विषय है।

विश्वा०—तपोनिधि! आपके प्रसादसे सन्तुष्ट होकर हमने बड़े ही आनन्दसे सात दिनोंतक पूर्ण सुखोंका अनुभव किया। परन्तु अब आज्ञा दीजिये तो राजधानीकी ओर प्रस्थान करूँ। प्रधानजीका समाचार आनेके कारण इसी समय विदा होना पड़ा।

वशिष्ठ—राजन्! राज्य-कार्य सम्पादन करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि न हो, इसी विचारसे मैं पूर्ण रूपसे आपको कुछ दिन और निवास करनेके लिये बाध्य नहीं कर सकता, कहिये और क्या इच्छा है? आपके कल्याणार्थ क्या आशीर्वाद दूँ?

विश्वा०—मुनिश्रेष्ठ! यदि मेरी एक कामना पूर्ण करें तो आपकी बड़ी कृपा समझूँगा।

वशिष्ठ—हाँ हाँ, निःसंकोच होकर अपनी इच्छा प्रकट करिये।

विश्वा०—केवल यही प्रार्थना है, कि आप अपनी कामधेनु मुझे प्रदान कीजिये, और उसके बदलेमें एक लक्ष गायें मुझसे भेंट स्वरूप लीजिये।

वशिष्ठ—राजन्! यह नन्दिनि तो मेरे जीवनका आधार है, वही मेरे सुखोंका संसार है, वही मेरी पूजनीया देवी है, मैं

प्रा०: काल ही उसका दर्शन कर तब अन्य कार्य करता हूँ, अतएव नन्दिनीके अतिरिक्त मैं आपकी सर्व कामनायें पूर्ण करनेसे समर्थ हूँ।

विश्वा०—परन्तु मेरी और कुछ इच्छा नहीं है, आपके आशीर्वादसे मुझे सभी सुख प्राप्त हैं। अबतो केवल "काम-धेनु" की इच्छा है। कृपाकर मुझे प्रदान करिये।

वशिष्ठ—नृपश्रेष्ठ! आपका यह विचार मेरी इच्छाके प्रतिकूल है, इस विषयमें आपका अधिक आग्रह करना भूल है, कारण कि कठिन परिश्रमसे प्राप्तकी हुई "यज्ञ धेनु" को मैं इस जीवनमें प्राण रहते तक पृथक नहीं कर सकता।

विश्वा०—मुनिराज! मेरा मान रखना आपको अवश्य ही उचित है, क्योंकि मैं आपका सम्राट हूँ?

वशिष्ठ—सत्य है, आपका मान रखनेके हेतु मेरा जो कुछ कर्त्तव्य था वह मैंने बहुत अंशोंमें पालन किया; परन्तु आपतो मेरे जातीय गोरत्न पर भी अपना अधिकार करना चाहते हैं:—

सब भांति सुख सम्पन्न है राजा! तुम्हारे राजमें।
बाधा न दो अन्याय वश, हम साधुओंके काजमें॥

विश्वा०—राज्यकी प्रत्येक वस्तु पर मेरा अधिकार है, और काम धेनुको प्राप्त करनेका मेरा दृढ़ विचार है, फिर आपको देना क्यों अस्वीकार है?

वशिष्ठ—यह मैंने अपनी कठोर तपस्या द्वारा प्राप्तकी है, इस पर

आपका कोई अधिकार नहीं। जिसके द्वारा मेरे कुटु-म्बका पालन होता है, जिसको पूजा किये बिना मैं आहार नहीं करता, उस इच्छित वरदात्रीको देना मुझे स्वीकार नहीं।

विश्वा०—यदि आप प्रसन्नता पूर्वक नन्दिनीको मेरे हवाले न करेंगे तो मैं विवश होकर उसे बल पूर्वक हरण करूँगा; परन्तु राज-हठसे अब न टरूँगा।

वशिष्ठ—आप हमारे राजा हैं, आपको सब कुछ करनेका साहस है

अब आपके सम्मुख विफल मेरा सभी प्रयत्न है।
पर आपके बलसे अधिक बलवान वह गोरत्न है॥

विश्वा०—क्या कहा? वह मेरे राज्य-बलसे अधिक बलवान है? एक साधारण गायको इतना अभिमान है, जिसके पास न बल है न जवान है! यह आपका उलटा ज्ञान है :—

बिन विचार क्या कहा तपोनिधि! आया कुछ भी ध्यान नहीं?
मम सेना मम तेज बाहुबल, का कुछ भी अनुमान नहीं?

वशिष्ठ—नृपश्रेष्ठ! ऐसे अभिमान सूचक शब्द आपके मुखसे शोभा नहीं देते। आप अपने बलको, अपने किसी बलवान शत्रुके सम्मुख लगाइये। तपोबलके सम्मुख बाहुबल अथवा सैन्य-बलका उदाहरण न दिखाइये।

विश्वा—मुनिवर! मैं अन्तिम वार निवेदन करता हूँ, कि काम धेनु प्रदान कीजिये।

वशिष्ठ—मेरे विचारमें आप हठ छोड़कर, राजधानीकी ओर प्रस्थान कीजिये।

विश्वा—क्या वास्तवमें आप मुझे बल पूर्वक प्राप्त करनेके लिये बाध्य करते हैं?

वशिष्ठ—मैं ऐसा होनेसे आपकी हानि देखता हूँ।

विश्वा—और मैं आपके अपमानसे बचना चाहता हूँ।

वशिष्ठ—इसी कारणसे कहता हूँ, कि मनोमालिन्य करना उचित नहीं।

विश्वा०—तब मेरी कामना पूर्ण करिये।

वशिष्ठ—यह तो असम्भव है।

विश्वा०—तो क्षमा करिये। (सेनापतिसे) सेनापति! जाओ, और मुनिराजके आश्रमसे काम-धेनुको जिस प्रकार हो हरण कर राजधानीकी ओर प्रस्थान करो।

(सेनापतिका प्रस्थान)

वशिष्ठ—विश्वामित्र! ऐसा अनुचित व्यवहार न करो।

विश्वा—तो काम धेनु देना स्वीकार करो।

वशिष्ठ—वह ब्राह्मणके अतिरिक्त और किसीके घर वास न करेगी, यदि बल पूर्वक उसे हरनेका ध्यान है; तो अवश्य ही तुमारे लिये विपत्तिका सामान है।

(वशिष्ठका प्रस्थान)

विश्वा—(स्वतः) इतना अभिमान! तपोबलका इतना मान!! आश्चर्यका विषय है :—

बाहुबलमें बढ़ गया, वृथा बखान कर गया।
अज्ञान हो अकड़ गया, कुचित्त चंग चढ़ गया ॥
पशु प्रेममें पकड़ गया, प्रधानतामें पड़ गया।
समानतामें सड़ गया, ऊँचाईमें उजड़ गया ॥

आनन्दी--महाराज! एक सामान्य काम-धेनुके कारण इतना क्रोध? यदि मैंने आज भरपेट खाया होता तो मैं अकेला ही काम धेनु लेकर प्रस्थान करता।

विश्वा—आनन्दी! यह हँसी करनेका समय नहीं है।

आनन्दी--न सही, परन्तु हंसनेमें हानि ही क्या है?

(एक सिपाहीका प्रवेश)

१ सिपा०—महाराज! शीघ्र चलिये, वशिष्ठके सौ पुत्र बड़ी कठोरता से युद्ध कर रहे हैं, सेनापतिजी आहत होकर गिर गये।

विश्वा— जाता हूँ जाता हूँ और उसके तपोबलको धूलमें मिलाता हूँ:—

धाऊँ धधकाऊँ मारूँ, मौतमें मरोड़ सभे—
जाऊँ जनाऊँ जोर, जोहें जहानमें।
सबको सुलाऊँ शर शय्या सजाऊँ आज—
श्रोणित शत शत्रुका, सभा दूँ श्मशानमें ॥
डर से न डोलैं डिगें डगमगाय डगर मांहिं—
खोदूँ कर खण्ड खण्ड, खेलके विधानमें।
बोलैं बार बार जो बटेर बोली व्यंग एक—
बाँधूं बन बाज बस, बधकी बन्धानमें ॥

(आगे आगे विश्वामित्र और उसके पीछे सिपाही तथा
जमदग्निका प्रस्थान। आनन्दी रह जाता है।)

आनन्दी—(स्वतः) महाराज विश्वामित्रने तो भगवान जाने मेरे भोजनमें वाधा देनेका विचार किया है। तो मैंने भी अब यहांसे अपना प्राण बचाकर प्रस्थान करना ही स्वीकार किया है। जाऊँ, जाऊँ राजधानीकी ओर प्रस्थान करूँ, कहीं ऐसा न हो, कि वशिष्ठके सौ पुत्रोंमेंसे एक दो मेरे पीछे भी पड़ जायँ।

(आनन्दीका प्रस्थान)

दृश्य-तीसरा।

——:——

(स्थान नीलाचल)

(वशिष्ठा श्रम)

वशिष्ठ मुनिके सौ पुत्र विश्वामित्रकी सेना द्वारा हत होते हुए दिखाई देते हैं, इसी समय वशिष्ठ क्रोधित हुए आते हैं और हत पुत्रों-को देखकर आकाशकी ओर हाथ जोड़ ईश्वरसे प्रार्थना करते हैं। इसी समय अरुन्धती तथा तीनों कन्याएः आकर रुदन करती हैं। विश्वामित्रकी सेना आश्रमके अन्दर चली जाती है।

वशिष्ठ—हे भगवन! क्या विश्वामित्रने मुझे निरवंश करनेकी प्रतिज्ञाकी है!

अरुन्धती—आह! मेरे शत पुत्रोंका विनाश! नहीं सहन होता, यह अनर्थ नहीं सहन होता।

वशिष्ठ—जाओ जाओ, आश्रमकी ओर जाओ। मैं इसी समय विश्वामित्रको उसकी करतूतका प्रतिदान दूंगा, जाओ जाओ, परन्तु "यज्ञ-धेनु" से रक्षाके लिये विनय करो।

(अरुन्धती तथा तीनों कन्याओंका प्रस्थान।)

वशिष्ठ—क्या करूं? क्या विश्वामित्रका विनाश करूं? (सोंचकर) नहीं, नहीं :—

क्षमा शक्ति है साधु शक्ति, फिर साधु शत्रुको क्षमा करे।
यही साधुका लक्षण है, नहिं किञ्चित मनमें तमा करे॥

वशिष्ठ मुनि आगे बढ़ते हैं और सहसा नेपथ्यकी ओर देखकर चौंक उठते हैं और दृढ़ होकर खड़े रहते हैं। इसी समय कुछ कोलाहल सुनायी देता है। वशिष्ठ आश्चर्यसे देखते हैं। इसी समय काम-धेनु उनके समीप आकर खड़ी हो जाती है, वशिष्ठ मुनि उसके शरीरपर हाथ फेरते हैं।

शब्द—मुनिराज! आज आप रुष्ट होकर मुझे किस कारण आश्रमसे विदा करते हैं?

वशिष्ठ—मातः नन्दिनी! विश्वामित्र अन्याय पर दृढ़ होकर तुम्हें बल पूर्वक हरण करने पर कटिबद्ध है, उसने मेरे सौ

पुत्रोंका विनाश किया। माता! अपने साथ अपने बचे हुए सेवकोंकी रक्षा करो।

शब्द—जो कुछ हो चुका वह होतव्य था; परन्तु अब चिन्ता न करो। जाओ मैं अपनी और तुमारी रक्षा स्वयं करूँगी।

इसी समय फिर कोलाहल सुनाई देता है। वशिष्ठ प्रस्थान करते हैं. इतनेमें विश्वामित्रकी सेना सहित जमदग्नि आता है और काम-धेनुके सम्मुख खड़ा हो जाता है।

जमदग्नि—वीरो! इस काम धेनुको बाँधलो और राज धानीकी ओर प्रस्थान करो।

(सब सैनिक कामधेनुको ओर अग्रसर होते हैं, इसी समय एक भयंकर शब्द सुनाई देता है। सब जहांके तहां खड़े रह जाते हैं।)

शब्द—सावधान! सावधान!! मुझे बल पूर्वक हरण करनेका साहस न करो, नहीं तो तुम्हारा नाश होगा।

जमदग्नि—(आश्चर्यसे, स्वतः) क्या काम धेनुकी आवाज! नहीं नहीं, यह वशिष्ठकी चतुराई है, बढ़ो बढ़ो वीरो क्या देखते हो?

सैनिकगण पुनः आगे बढ़ते हैं, इसी समय एक भयंकर शब्द फिर होता है और साथ ही कामधेनुके शरीरसे अनेक शस्त्र धारी वीर प्रकट होकर विश्वामित्रकी सेनापर टूट पड़ते हैं, घोर संग्राम होता है। जमदग्नि भागता है, इतनेमें सारी सेनाका विनाशकर, कामधेनुको सेना एक ओर प्रस्थान करती है, कामधेनु भी अन्दर चली जाती है। इसी समय हाथमें गदा लिये क्रोधित विश्वामित्र आते हैं और लाशोंको देख स्तम्भित हो जाते हैं।

विश्वा०—(क्रोध पूर्वक) कहां है ? कहां है ? मेरी सेनाका विध्वंस करने वाला वशिष्ठ कहां है ? आज मैं उसका सारा तपोबल खण्डित करूँगा, उसका शिरच्छेदन करूँगा, मैं इसी क्षण उसे सदैवके लिये इस संसारसे उठाकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करूँगा। गदाघातसे असका मस्तक चूर्ण करूँगा :—

(वशिष्ठ मुनिका प्रवेश)

वशिष्ठ—(आते ही) विश्वामित्र ! मेरे शत पुत्रोंका नाशकर, अपनी सेनाका विनाश कर भी शान्त नहीं हुए ! बस करो, बसकरो, यह नरहत्या, ब्रह्महत्यायें तुमारा भी नाश करदेंगी।

विश्वा०—तुम मेरे नाशके कारण नहीं परन्तु मैं इसी समय तुमारा नाश करूँगा :—

गदाघातसे फोड़ा अंग अंग सम्पूर्ण।
पदाघातसे मैं तेरा मस्तक करदूँ चूर्ण ॥

वशिष्ठ—सावधान ! सावधान !! :—

आकारण आनमें अभिमानमें न अनर्थ आने दो।
समझलो सोंचलो सहलो, सभी सामर्थ, जाने दो ॥

विश्वा०—नहीं, मैं तुझे प्रतिदान अवश्य दूँगा, सावधान हो जाओ मैं प्रहार करता हूँ—

विश्वामित्र मारनेके लिये गदा उठाते हैं। इसी समय वशिष्ट मुनि ब्रह्माग्नि उत्पन्न करते हैं।

Durga Press, Calcutta.

(देखिये पृष्ठ—संख्या २१)

वशिष्ठ—देखो, मैं भी ब्रह्माग्नि द्वारा तुम्हारा संहार करता हूँ।

(विश्वामित्र मारनेके लिये गदा उठाते हैं। इसी समय वशिष्ठ मुनि ब्रह्माग्नि उत्पन्न करते हैं। विश्वामित्र अग्निसे हट खड़े होते हैं। इसी समय नारद आते हैं और दोनोंको सावधान करते हैं।)

नारद—(आते ही) शान्त ब्रह्मर्षि ! शान्त !! ब्रह्माग्निको सम्बरण करो।

(अग्नि लोप हो जाती है, दोनों सर झुकाकर खड़े होते हैं)

नारद—विश्वामित्र ! तुम ब्रह्मत्वके सम्मुख इतना साहस न करो, अपने आपको ब्रह्माग्निसे बचाओ। जाओ, जाओ। मुनि-राज ! शान्त होइये। आपको क्रोध करना इस समय योग्य नहीं, एक सामर्थ्यहीनके प्रति ब्रह्माग्निका प्रयोग उचित नहीं।

(वशिष्ठ क्रोध पूर्वक खड़े रह जाते हैं।

विश्वा०—(स्तवः) धिक्कार है राज्यबलको ! धिक्कार है क्षात्र बलको ! कुछ नहीं, कुछ नहीं। तपोबलके सम्मुख सब बल तुच्छ हैं। अब राजधानीकी ओर नहीं; परन्तु तपोवन-की ओर जाऊँ और घोर तपस्या द्वारा शंकरसे दिव्यास्त्र प्राप्तकर तब इस अभिमानीका तपोबल धूलमें मिलाऊँ।

(विश्वामित्रका प्रस्थान)

वशिष्ठ—देवर्षि ! आपने इस समय मुझे पूर्ण उपदेशप्रद शब्द कह कर मुझे मेरा कर्त्तव्य सुझा दिया। आह ! मैंने वृथा ही क्रोधकर यह अनुचित व्यवहार किया। इतनी नरहत्याका

कारण मेरा ही हठ है। जाऊँ जाऊँ, अपने इस कुकर्मका प्रायश्चित्त करूँ।

नारद—नहीं नहीं, आप किसी प्रकार भी दोषके भागी नहीं हो सकते। यह जो कुछ हो रहा है, वह दैवलीला है। नहीं तो विश्वामित्र राज-कार्य अथवा सुख-भोग त्यागकर तपस्याके लिये अग्रसर न होता। चलिये, आश्रमकी ओर प्रस्थान करिये, और शतपुत्रोंकी बीर आत्माकी शान्तिके लिये क्रिया कर्म आदि कर हरि ध्यानमें निमग्न होइये। बस यही प्रायश्चित्त है। चलिये। मैं भी पुत्र-शोकसे पीड़ित सती अरुन्धतीको साँत्वना देनेके हेतु आश्रममें चलता हूँ।

(वशिष्ठ तथा नारदका प्रस्थान)

दृश्य चौथा।

(स्थान—एक बन मार्ग)

अत्यन्त शोचनीय अवस्थामें एक गृहस्थ अपनी स्त्री तथा एक बालकके साथ आता है। सब बैठ जाते हैं। स्त्री अपने आँचलमें बँधी हुई एक रोटी खोलकर आधी बालकको देती है और आधी पतिको देना चाहती है।

स्त्री—लो प्राणनाथ! इस आधी रोटीसे ही आत्माको शान्त करो।

गृहस्थ—प्रिये! और तू आहार न करेगी! तूने सात दिवसोंसे

एक दाना अन्न भी मुखमें नहीं दिया। धन्य है सती! तू धन्य है। हा! कोई रक्षा करनेवाला नहीं, कोई टुकड़ा देनेवाला नहीं :—

मातायें हीन हो रहीं, गोदीके लालसे।
मरते हैं बिना अन्नके, बिन अन्तकालसे॥
बच्चोंको बेचके, मा बाप हैं खाते।
रक्षा करो रघुनाथ! इस दारुण अकालसे॥

स्त्री—हे भगवान! देशकी यह कैसी दुर्गति है!

बालक—माता! यह रोटी भी मुझे देदे, बड़ी भूख लग रही है।

स्त्री—(अपने आँसू पोंछती हुई) बेटा! यह तेरे पिताजी खाँयगे, तुझे फिर माँगकर ला दूँगी।

गृहस्थ—नहीं नहीं, मुझे नहीं चाहिये। पहले बच्चेकी आत्मा शान्त कर।

स्त्री वह आधी रोटी बच्चेको दे, माथेपर हाथ मारकर उदासीन हो, बैठ जाती है, इसी समय आगे आगे एक ग्रामीण और उसके पीछे एक दरबारी शीघ्रतासे आते हैं, यह सब तीनों डरसे पीछे हट कर देखा करते हैं। किसान अपने हाथकी कुछ रोटियाँ कपड़ेमें लपेटकर बगलमें दबा लेता है, दरबारी उसकी ओर क्रोध भरी दृष्टिसे देखता हुआ खड़ा रह जाता है, ग्रामीण भी बैठकर उसकी ओर उसी प्रकार देखता रहता है।

दरबारी —(ग्रामीणसे) क्या तू रोटी मुझे न देगा ?

ग्रा०—नहीं ।

दर०—क्या नहीं देगा ? क्या मैं तुझसे बलवान नहीं ?

ग्रा०—नहीं ।

दर०—अरे मूर्ख ! बड़ेको बड़ा नहीं मानता ?

ग्रा०—नहीं ।

दर०—तो फिर किसको बड़ा मानता है ?

ग्रा०—एक परमात्मा और दूसरे अपने राजा विश्वामित्रको ।

दर०—और उन्हींका राज-दरबारी मैं हूँ । फिर मुझे भी बड़ा करके नहीं मानता ?

ग्रा०—नहीं ।

दर०—तो फिर मैं कौन हूँ ?

ग्रा०—मेरे ही समान अकालका मारा हुआ एक मनुष्य ।

दर०—परन्तु मुझे नहीं जानता कि मैं राजा विश्वामित्रका एक प्रधान दरबारी हूँ और धनवान हूँ ।

ग्रा०—तो जाओ, धनको खाओ, मेरे सम्मुख दो रोटीके लिये न बिलबिलाओ ।

दर०—क्या सत्य ही तू इस समय बाल बच्चोंके लिये भी रोटी न देगा ?

ग्रा०—नहीं ।

दर०—किस कारण ? क्या हम लोग तुमारे रक्षक नहीं ? हम तुमारी रक्षा करते हैं और तुम समय पर दो रोटी नहीं दोगे ?

श्रा०—यदि राजाकी अनुपस्थितिमें तुमने हम गरीबोंके साथ अच्छा बर्त्ताव किया होता तो हम भी तुम्हारे काम आते :—

राजका रक्त धन सब चूसकर, बातें बनाते हो?
अभी अभिमानमें अपने, न कहते भी लजाते हो॥

दर०—फिर वही बात! दुष्ट! बढ़ता ही जाता है, तनिक भी भय नहीं खाता है! बड़ेको छोटा बनाता है?

श्रा०—

नहीं कोई बड़ा छोटा, जो धन है धूप छाया है।
सभी कुछ छोड़ जायेगा, यहां जितना कमाया है॥
बनाया जिसका मैं नर हूँ उसीका तू बनाया है।
क्षमा है पास निर्धनके तो तेरे पास माया है॥

दर०—नहीं, नहीं, यह तेरी मूर्खता है। तू मुझसे श्रेष्ठ नहीं हो सकता।

श्रा०—क्यों नहीं हो सकता? :—

तो क्या मैं सरके बल चलता हूँ, तू पैरोंसे जाता है?
तो क्या मैं अन्न खाता हूँ तो तू चाँदी चबाता है?
तो क्या जगदीश इस संसारमें, तेरा ही दाता है?
तो क्या तेरा कोई परमात्मासे गुप्त नाता है?

दर०—बस खबरदार। मूर्ख हमारे ही टुकड़े खाता है और हमको आखें दिखाता है?

श्रा०—नहीं, कदापि नहीं :—

तुम वृथा हो गर्वमें, और ध्यान धनकी ओर है।

तुम नहीं समझे कृषी ही, प्राण-जीवन डोर है ॥
हम ग़रीबोंका परिश्रम, अन्न उपजाता है जो ।
अन्न वह खाकर तुमारी देहमें यह जोर है ॥

दर०—अच्छा तो तेरा हठ अभी दिखाई दे जायगा ।

(दरबारी ग्रामीणकी रोटियाँ बल पूर्वक छीन लेता है और एक लात उसे मारता है । ग्रामीण चुपचाप उसकी ओर देखकर एक आह भरता है ।)

ग्रामीण—अच्छा, और सतालो, अच्छी तरह सतालो । परन्तु ध्यान रखना । जिस प्रकार तुम अपनी जीवन-रक्षाके लिये प्रजाके हाथोंसे रोटी छीनते हो, उसी प्रकार हमारे शापसे समय पर तुमारे बाल बच्चोंके हाथोंसे परमात्मा रोटी छीन लेगा :—

पराई देख पल पल, पेटमें क्यों शूल होता है ?
प्रजाकी पीर पर पापी ! तू क्यों प्रतिकूल होता है ?
पदाधारी पतित होकर, प्रजा पत, भूल खोता है ?
प्रजापतिका सभी प्राधान्य, यों निर्मूल होता है ?

(रानी सुनेत्रा तथा राजकुमारका प्रवेश)

सुनेत्रा—यहाँ क्या हो रहा है ?

(दरबारी चौंककर सर झुकाता है । वह तीनों भी आगे आकर सर झुकाते हैं ।)

ग्रामीण—महारानी ! यहां वही हो रहा है जिसके प्रतापसे प्रजाका रोम रोम दुःखा रहा है । महाराजके बनगमनके पश्चात राज्यका अधिकारीवर्ग ग़रीबोंपर अत्याचार कर रहा है । (दरबारीकी ओर संकेत कर) यह देखिये, आपके

राज दरबारीकी करतूत, जिसने मुझे लात मारकर, कठिन परिश्रमसे प्राप्तकी हुई रोटियाँ छीन लीं।

सुनेत्रा—(दरबारीसे) क्यों दुष्ट! क्या प्रजाके प्रति ऐसा ही व्यवहार करनेके लिये तुम इतना वेतन और मान पाते हो। अपने पेटके लिये दूसरेका पेट काटकर खाते हो। बोलो बोलो, किस कारणसे इसके साथ ऐसा वर्त्ताव कर रहे हो?

गृहस्थ—(हाथ जोड़कर) महारानीजी एक एक रोटी हमें दिलाकर हम तीनोंके प्राण बचाओ।

सुनेत्रा— ठहरो न घबराओ।

दर०—महारानी! इसका मुख्य कारण इस समयका अकाल है, और अपने भूखे बच्चोंका खयाल है। इसके साथ ही साथ इसका कारण इस मूर्खका अनुचित व्यवहार है।

सुनेत्रा—तो तुमपर शतबार धिक्कार है। यह भयंकर अकाल क्या तुम्हारे ही लिये है, मेरे लिये नहीं! मेरी ओर देखो, मैंने प्यारी प्रजाका दुःख दूर करनेके लिये राज्य-धनके अतिरिक्त अपने वस्त्रा-भूषण तक बेच डाले, और अब विवश होकर युवराजकी प्राण-रक्षाके लिये भिक्षा मागना स्वीकार कर महलसे निकल आयी हूँ। ऐसी राज्य भक्त प्रजाके प्रति तुम ऐसी दुष्टता दिखा रहे हो। राज्य शासन पर कलंकका टीका लगा रहे हो? दो, इसकी रोटियां इसे दो और इससे क्षमा मांगो।

(दरबारी रोटियाँ लौटा देता है।)

दर०—महारानी! यह आप क्या कह रही हैं? मैं इससे क्षमा मागूँ? क्या इसका और मेरा पद एक है?

सुनेत्रा—एक ही नहीं यह तुमसे श्रेष्ठ है, इन्हींके पैसोंसे तुमारा पालन होता है, इन्हींके परिश्रमकी कमाईसे तुम जीवित हो। तुमने इस समय मेरी आज्ञानुसार इससे क्षमा नहीं मांगी। इसका दण्ड तुम्हें अवश्य भोगना होगा। जाओ इसी समय जाओ, यदि तुझे अन्न प्राप्त न हो तो अपने बाल बच्चों-को बेंचकर अन्न लाओ और एक सप्ताहतक इसके कुटुम्बको खिलाओ। यदि ऐसा न करोगे तो तुम्हारी सारी सम्पति हरण कर तुम्हें कारागार वासका दण्ड दिया जायगा।

ग्रामीण—धन्य हो रानी! तुम धन्य हो। (दरबारीकी ओर देखकर)

देखो, आखों वाले देखो!

जिस राज्यमें राजाके यह सुविचार होते हैं।

प्रजाजन भी उसीके वास्ते धन प्राण खोते हैं॥

दर०—क्षमा करिये। महारानीजी! क्षमा करिये, मैं आपकी आज्ञाको पालन करूँगा :—

मेरे लिये मेरा यहां अपमान न होता।

मुझको मेरे कर्त्तव्यका, कुछ ज्ञान न होता॥

ग्रामीण—राज रानी क्षमा करिये, अब इन्हें क्षमा करिये।

सुनेत्रा—(दारबारीसे) देखो, इसका हृदय भी देखो। तुमने इसके संग क्या व्यवहार किया, और यह तुम्हारे लिये किस प्रकार क्षमा मांगता है।

दरबारी—देखा और अच्छी तरह देखा :—

जिन्हें हम जानते थे, धन बिना कंगाल होते हैं।
वही धनियों का गुदड़ीके, चमकते लाल होते हैं॥

सुनेत्रा—(ग्रामोणसे) इनमेंसे तीन रोटियाँ इन तीनोंको देकर इसके साथ जाओ और इसके द्वारा एक सप्ताह तक अपना निर्वाह चलाओ।

(ग्रामीणका हँसते हुए और दरबारीका उदासीन भावसे प्रस्थान)

ग्रहस्थ—महारानी सुनेत्रा! आपकी जय हो।

(ग्रहस्थ अपना स्त्री तथा बच्चोंके साथ प्रस्थान करता है)

राजकुमार—माता! मुझे भी एक रोटी क्यों न ले दी?

सुनेत्रा—(प्यारसे) पुत्र! प्रजाको दुःखी कर अपना पेट नहीं भरना चाहिये। हमको देनेवाला वह परमात्मा देगा।

(राज त्रिशंकूका कुछ सैनिकसहित प्रवेश)

त्रिशंकू—(आते ही) अवश्य ही देगा, परन्तु किसी बहानेसे।

सुनेत्रा—(चौंककर) कौन अयोध्यानरेश महाराज त्रिशंकू!

त्रिशंकू—क्षमा करो महारानी! तुमपर इस समय घोर संकट है, इसी कारण मैंने लोक लाज त्यागकर तुमारे सम्मुख आनेका साहस किया है। चलिये महलको ओर प्रस्थान कोजिये। यह सेवक आपको और यथा शक्ति प्रजाको भी उन कई दिन तकके लिये सन्तुष्ट कर देगा, जबतक महाराज विश्वामित्र तपोवनसे न फिरें।

राजा त्रिशंकू कुछ संकेत करता है। एक दरबारी राजकुमारको गोदीमें उठा लेता है।

सुनेत्रा--धन्य हो महाराज ! तुम धन्य हो । आपका यह उपकार कभी न भूलेगा । आपने मित्रताकी महिमा दिखाकर महाराजका मस्तक ऊँचा कर दिया ।

(सबका प्रस्थान)

दृश्य-पाँचवाँ

(स्थान--तपोवन)

(विश्वामित्र समाधि लगाये बैठे हैं, इसी समय महादेवजी प्रकट होते हैं, विश्वामित्रका ध्यान भंग होता है और वह हाथ जोड़कर सम्मुख खड़े हो जाते हैं, महादेव हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हैं ।)

विश्वा०--(हाथ जोड़कर) अहाः ! भोला नाथ ! :—

बाम उमा अमला जटा, उरकर उरग अनूप ।
शीश शशी चरची भसम, जय जय शंकर रूप ॥

महादेव--विश्वामित्र ! मैं तेरी अखण्ड तपस्यासे सन्तुष्ट हुआ, बर मांगो, क्या इच्छा है ?

विश्वा०—उमापति ! इच्छित समय पर आपके दर्शनके अतिरिक्त :—

मनसा वाचा कर्मना, भक्ति शक्ति हरि ध्यान ।
धनुष पाशुपत मन्त्र संग, भक्तहिं करो प्रदान ॥

महादेव—तथास्तु । (तीन वार ताली बजाते हैं)

(आकाश मार्गसे तीर धनुष तथा पाशुपतागमन)

महादेव—यह लो तीर, धनुष और पाशुपत, मेरे सम्मुख आओ और मन्त्र ग्रहण करो ।

(विश्वामित्र घुटनोंके बल बैठ जाते हैं, महादेव अस्त्र देते हैं और विश्वामित्रके कानमें मन्त्र देते हैं ।)

विश्वा० —(सिरझुकाकर) उपकार भगवन् ! आपका उपकार हुआ और भक्तका बेड़ा पार हुआ ।

(शिवका अन्तरद्धिन हो जाना)

विश्वा०—मिल गया, भोले नाथका प्रसाद मिल गया । वशिष्ठका बल भंग करनेका साधन मिल गया । तपस्याके विशाल सरोवरमें परिश्रमका कमल खिल गया । अब उस तपस्वीका अहंकार तोड़ूँगा, कामधेनु प्राप्त किये बिना उसका पीछा न छोड़ूँगा :—

आँधी अँधियारी आवै, अन्धकार आँखन आय,
ऐसी अनहोनी उपज, आय तहाँ आपसे ॥

पामर पाखण्डियोंको पकड़ पकड़ पीस डारूँ,
पलमें परायें पापी पाशुपत तापसे ॥

शत्रु शर शय्या पर सहकत हों शेष तहां,
सुरपुर सिधारैं सभी सोये मम शापसे ॥

गरज गरज भूत प्रेत मारैं उजारैं शत्रु,
गिरैं गहरायँ, गिरजापतिके प्रतापसे ॥

(विश्वामित्रका प्रस्थान)

दृश्य छठां

——:——

(स्थान-- बन मार्ग)

(सूर्य्य वंशी महाराज त्रिशंकू तथा अयोध्यापति शक्ति मुनिका प्रवेश)

त्रिशंकू – मुनीश्वर ! क्या मेरी मनोकामना पूर्ण न होगी ?

शक्ति०—नहीं, नहीं, जब मेरे पिताने तुम्हारे यज्ञका कार्य करना अस्वीकार किया है तो मैं भी स्वीकार नहीं कर सकता।

त्रि०—आप ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जैसे तेजस्वीके पुत्र होकर एक सामान्य यज्ञ सम्पूर्ण करनेमें असमर्थता प्रकट कर रहे हैं। यह बड़े आश्चर्यका विषय है।

श०—महाराज त्रिशंकु ! तुम असम्भवको सम्भव करनेका यत्न कर रहे हो। परमात्माका बनाया हुआ नियम नहीं टल सकता। ऐसा शक्ति-शाली कोई नहीं है जो तुमको सदेह स्वर्गवास करा सके। ऐसे व्यर्थ विचारोंको छोड़कर अयोध्याकी ओर प्रस्थान करो। जब पिताजीने कह दिया है तो असत्य नहीं।

त्रि०—तो स्पष्ट ही कहिये, कि मुझमें सामर्थ्य नहीं।

श०—राजन् ! साधुओंके प्रति ऐसे व्यंग शब्द व्यवहार न करो।

त्रि०—रहने दीजिये यह सब उपदेश। जब आप पुरोहित होकर यजमानका कार्य न करायेंगे, तो मैं भी अन्यको अपना राज्य-पुरोहित बनाऊंगा और अपना कार्य सम्पूर्णकर दिखाऊँगा। एक तो हमारे मित्र महाराज विश्वामित्रके आगे

अभिमान किया, तो आपके एक सौ भाई मृत हुए। फिर भी अभी उनका क्रोध, दूर न हुआ। दूसरी बार आप बचे हुए दोनों महात्मा पुनः अभिमान करते हैं, तो अब मैं भी राज-हठके अनुसार सदेह स्वर्ग जाऊँगा और विश्वामित्रजीसे अपना यज्ञ सम्पूर्ण कराऊँगा।

शक्ति—और मैं भी कह देता हूँ कि तुम्हारा कार्य सिद्ध न होगा, ब्रह्मर्षि वशिष्ठका बचन असत्य नहीं होगा।

त्रिशंकु—परन्तु मैं सत्य ही कराऊँगा और तुमको दिखाऊँगा। जिस प्रकार तुम्हारे पिता वृद्ध होकर, तथा मतिहीन होकर अभिमानी होगये हैं। उसी प्रकार तुम भी गर्व करते हो, कि हम नहीं स्वीकार करेंगे तो अब किसीका यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होगा।

श०—बस, बन्द करो जिह्वाको बन्द करो, यदि मेरे पिताकी निन्दा करोगे तो मैं तुम्हें अभी शाप दूँगा।

त्रि०—रहने दो अपना शाप। अब तुम्हारा शापका किया कुछ न होगा। यह शक्ति केवल तुम्हारे पितामें थी सो चल बसी, तुममें वह सामर्थ नहीं।

श०—दुष्ट! अधिक न बोल। मित्रके कारण बृथा विवाद न बढ़ा, नहीं तो इसका परिणाम भयंकर होगा।

त्रि०—होने दो, परन्तु तुम्हारे और तुम्हारे पिताके अहंकारका भी परिणाम भयंकर होगा। तुम दोनोंकी मति भ्रष्ट होगयी हैं, शक्ति नष्ट होगयी है।

श०—बस, पिताकी निन्दा अधिक नहीं सुन सकता, जा चाण्डाल हो जा और अपनी करनीका फल पा।

(शक्ति मुनिका प्रस्थान)

त्रि०—(चौंककर, स्वतः) क्या चाण्डाल होनेका शाप ? जाऊँ जाऊँ, अपने मित्र विश्वामित्रको सारा हाल सुनाऊँ और अपनेको शाप मुक्त कराऊँ।

(त्रिशंकूका प्रस्थान)

दृश्य सातवाँ।
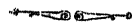
(स्थान—नीलाचल)

सहसा चारों ओरसे भयङ्कर शब्द सुनकर कुछ ऋषि लोग शक्ति मुनि के संग आते हैं और चारों ओर देखकर व्याकुल होते हैं। चारो ओरसे अग्नि वर्षा होती है

१ ऋषि—(औरोंसे) यह क्या ! यह क्या !! सारा तपोबन जल रहा है, ऋषियोंके आश्रम भ्रष्ट हो रहे हैं।

२ शक्ति०—वह देखो, वेगके साथ राक्षस, भूत प्रेत ऋषियोंको नष्ट कर रहे हैं।

३ ऋषि—चलो, चलो, दुष्टोंका दल इधर ही आ रहा है।

इतनेमें उन सबको राक्षस लोग आकर घेर लेते हैं और भयानक गर्जन कर सबको मारना आरम्भ करते हैं, सब वशिष्ठ मुनिकी

दुहाई देते हुए प्राण छोड़ देते हैं। इसी समय वशिष्ठ
मुनि कुटिसे निकलते हैं और चौंककर देखते हुए
अपना कमण्डल उठा लाते हैं।

वशिष्ठ—कैसा घोर अत्याचार! ऋषि मुनियोंका विनाश! कौन दुराचारी तपोवन भ्रष्ट करने आया है, किसने यह दारुण हत्याकाण्ड मचाया है! (जल हाथमें लेकर) यत्र आय तत्र गताः।

सब भूत प्रेत राक्षस चिल्ला चिल्लाकर भाग जाते हैं। इसी समय
बड़े क्रोधमें भरे हुए हाथोंमें तीर धनुष तथा पाशुपत लिये
विश्वामित्र प्रवेश करते हैं और क्रोध पूर्वक वशिष्ठके
सम्मुख खड़े हो जाते हैं।

वशिष्ठ०—कौन विश्वामित्र!

विश्वा०—हाँ, तुम्हारा गर्व खर्व और तप खण्ड खण्ड करनेवाला तपस्वी विश्वामित्र।

वशिष्ठ०—विश्वामित्र! विश्वामित्र! ऐसा अनर्थ न करो, तुम्हारे इस घोर अत्याचारसे सारा तपोवन भ्रष्ट हो गया ऋषियोंका जीवन नष्ट हो गया, बस छोड़ दो, यह दुष्टता छोड़ दो, नहीं तो इसी समय तुम्हारा विनाश करूँगा।

विश्वा०—नहीं, नहीं, इसके पहले मैं तुमारा विनाश करूँगा, अब मैं तुमसे भयभीत होनेवाला नहीं।

वशिष्ठ०—जानता हूँ, जानता हूँ कि तुमने पाशुपतास्त्र प्राप्त किया है परन्तु सावधान ब्रह्मास्त्रके सम्मुख तुम्हारा अस्त्र-बल

काम न आयगा, वृथा जीवन जयगा। एकवार तुम ब्रह्माग्निसे भाग्यवश बच गये इस बार बचने न पाओगे।

विश्वा०—देखा जायगा, ठहर ठहर अहंकारी ठहर। सारा ब्रह्मत्व धूलमें मिलाता हूँ, तुम्हें यमलोक पठाता हूँ, सावधान मैं घात करता हूँ।

(विश्वामित्र धनुषपर तीर चढ़ाते हैं।)

वशिष्ठ०—अच्छा, तो तुम भी सावधान होजाओ। शिव, शिव, शिव, आओ, ब्रह्मदण्ड! आओ, शत्रुका विनाश करो। भक्तकी रक्षा करो।

इसी समय एक भयंकर शब्द होता है और क्रोधमें भरे हुए महादेव प्रकट होते हैं, विश्वामित्र तथा वशिष्ठ मुनि सर झुकाते हैं।

महादेव—ब्रह्मर्षि! मैं पाशुपत द्वारा भक्तको रक्षा करूँगा, ब्रह्म-दण्डको अपने ऊपर धारण करो। अन्यथा सृष्टि भस्म हो जायगी और इसके भागी तुम बनोगे।

वशिष्ठ०—(व्याकुल होकर) कहाँ हो! कहाँ हो!! गायत्री माता! भक्तकी रक्षा करो।

इसी समय एक भयानक शब्द होता है और अधरमें एक कमलके पुष्पपर विराजमान गायत्री देवी प्रकट होती हैं।

गायत्री—कौन रक्षा कर सकता है! सृष्टि संहारक शंकरसे कोई रक्षा नहीं कर सकता। ब्रह्मर्षि! इसी समय ब्रह्म-

विश्वामित्रका वशिष्ठपर आक्रमण ।

इसी समय एक भयानक शब्द होता है और अधरमें एक कमलके पुष्पपर विराजमान गायत्री देवी प्रकट होती हैं ।

Durga Press, Calcutta.

(देखिये पृष्ठ—संख्या ३६)

दण्डको अपने ऊपर धारण करो। नहीं तो सृष्टि भस्म हो जायगी।

गायत्रीका अन्तर्द्धान होना, वशिष्ठ मुनिकी तीन कन्याओंका व्याकुल होकर आना और एक साथ हाथ जोड़कर आकाशको ओर ध्यान किये खड़ी होना।

तीनों—(एक स्वरसे) आओ आओ ब्रह्मदण्ड! आओ और पिताके स्थानपर हमारा बलिदान ग्रहण करो।

इस समय भयंकर गर्जनके साथ चारों ओर अग्निवर्षा करता हुआ ब्रह्मदण्ड आकाश मार्गसे आता है और तीनों कन्याओंपर गिरता है। तीनों भस्म हो जाती हैं और उनके तीन पंजर सम्मुख खड़े नजर आते हैं, वशिष्ठ आश्चर्यसे और विश्वामित्र क्रोध पूर्वक खड़े देखते हैं।

वशिष्ठ—धन्य देवियों धन्य! भोलानाथ! यह निर्दोष कन्यायें भी नष्ट हुईं।

महादेव—ब्रह्मर्षि! चिन्ता न करो। यह इसी दिनके लिये उत्पन्न हुई थीं। यह तीनों तीन शक्तियाँ थी।

विश्वा०—(शंकरके समीप जाकर शस्त्र रखकर) यह लीजिये भगवन्! यह लीजिये अपने शस्त्र (शस्त्र रखकर अपने स्थानपर खड़े होकर, स्वतः) धिक्कार है क्षत्रियत्वपर, धिक्कार है शस्त्र बलपर, बस अब ब्रह्मबल ही प्राप्तकर इस अभिमानीके सम्मुख आऊँगा—घोर तपस्या करूँगा, अखण्ड तपस्या करूँगा, ब्रह्माण्डको हिला दूँगा,

पृथ्वीको डगमगा दूँगा, देवताओंको अपने तपोबलका प्रभाव दिखा दूँगा, विश्वामित्रका हठ देवताओंके बन्धनको तोड़ देगा, वाधाओंको मरोड़ देगा, सृष्टिका नियम मेरा मार्ग छोड़ देगा, जाता हूँ जाता हूँ। ब्रह्मा-जीको जगाता हूँ। एकबार राज्य व्यवस्था देखकर तपमें ध्यान लगाता हूँ।

(विश्वामित्रका प्रस्थान।)

वशिष्ठ०—उमापति! क्या अब मेरा विनाश होगा?

महादेव—नहीं, नहीं। तुम्हारी क्षमा शक्तिका प्रकाश होगा।

वशिष्ठ—और इन कन्याओंकी क्या गति होगी?

महादेव—यह शक्तियाँ इसी समय सदेह स्वर्ग जायँगी। आओ गंगे! आओ, तीनों शक्तियोंको बन्धनसे मुक्त करो।

(शिवजीकी जटासे गंगाकी धाराका प्रकट होकर तीनों पञ्जरोंपर पड़ना। तीनों कन्याओंका सदेह स्वर्गकी ओर चढ़ना। शंकरका आशीर्वाद देना। इसी समय सुनेत्राका आकर आश्चर्यसे विश्वामित्रको देखते हुए हाथ जोड़कर खड़े रहना।)

वशिष्ठ०—धन्य हो शंकर! आप धन्य हो।

(दोनों हाथ जोड़ खड़े रहते हैं, शंकर आशीर्वाद देते हुए दिखाई देते हैं। पर्दा गिरता है।)

दृश्य पहला ।

(स्थान—तपोवन)

(विश्वामित्र एक शिला पर समाधि लगाये बैठे हैं ।)

आकाश मार्गसे मेनका तथा कामदेवका उतरना । कामदेव छिप जाते हैं मेनका अन्य दो अप्सराओंके संग आती है । सब विश्वामित्रके सम्मुख खड़ी हो नृत्य गीत करती हैं ।

मेनका—(औरोंसे) वह देखो तपस्वी ध्यानमें निमग्न है ।

रति—(मुसकराकर) फिर बिलम्ब क्यों ! अपना कार्य सिद्धकर शीघ्र ही स्वर्गमें आना, कहीं नरलोकमें ही न रह जाना ।

मेनका—(मुसकराकर) छोड़ो छोड़ो, यह ठिठोली ! मुझे तो एक प्रकारका भय हो रहा है ।

१ अप्सरा—भय किस कारण ! कामदेवकी उपस्थितमें भय करनेकी आवश्यकता नहीं, आओ कुछ गाओ, जिससे तपस्वीका तपभंग हो और विजय हमारे संग हो ।

(गायन)

कामको जीत सके सो वीर ॥
लाखों देखे जती तपस्वी, लाखों देखे धीर ।
मर्म मार्गसे डिगे, खायकर काम देवका तीर ॥ कामको० ॥
चली न एक तहां जप तपकी, जहां कामकी पीर ।
नहीं रही बश कभी इन्द्रियाँ, नहिं बश रहा शरीर ॥कामको०॥

(गायन गाती हुई अन्य अप्सरायें प्रस्थान करती हैं, विश्वामित्रका ध्यान भंग होता है। मेनका एक वृक्षकी आड़में छिप जाती है, कामदेव पहला बाण छोड़ते हैं। विश्वामित्र चारों ओर देखते हुए उठ खड़े होते हैं।)

विश्वा०—(स्वतः) आश्चर्य, महाआश्चर्य, यह क्या! मेरा ध्यान भंग करनेकी चेष्टा किसने की? गायनकी मधुरध्वनि एक बार कर्ण पवित्र कर कहाँ लोप हो गई!

(मेनका एक बार दिखायी देकर फिर वृक्षकी आड़में छिप जाती है। कामदेव दूसरा बाण छोड़ते हैं।)

विश्वा०—यह कौन? (हृदयपर हाथ धरकर) चित्तको चञ्चल करनेवाली एक मनोहर प्रतिमा! हैं! मैं कामोन्मादके समान वशीभूत हो रहा हूँ।

(मेनका पुनः सम्मुख होकर मुसकराती है। विश्वामित्रसे आँखें चार कर फिर वृक्षकी आड़में हो जाती है, विश्वामित्र आगे बढ़ते हैं।)

विश्वा०—(स्वतः) मैं क्या देख रहा हूँ? कोई दैवी प्रकृति अथवा प्रकृत्तिका कोई निराला रूप? :—

चमकत चहुँ ओर चित्र, चन्द्रमा समान ज्योति।
चञ्चल चित चोर चतुर चपला लखात है॥
कामिनि कामातुर कुच कुम्भ, काया कंचन सम।
किसकी करतूत कली कानन मुरझात है॥
नारी नवेली नवयौवना अकेली।

नयनन निहारत नेह नाहक लगात है ॥
मोहत मन पलक मार मुसकुरात बार बार,
माधुरी मनोहर मृग नयना मटकात है ॥

विश्वामित्र मेनकाकी ओर अग्रसर होते हैं, मेनका एक ओर हट जाती है। विश्वामित्र फिर उसकी ओर बढ़ते हैं। वह पुनः वृक्षकी ओटमें हो जाती है, इसी प्रकार दो तीन बार वृक्षकी परिक्रमा होती है अन्तमें विश्वामित्र मेनकाका आँचल पकड़ लेते हैं।)

(कामदेव तीसरा बाण मारते हैं।)

विश्वा०—सुन्दरी! तुम कौन हो? देवी हो, दानवी हो? कौन हो?

मेनका—तपोनिधि! मैं दुःखिनि देवराज इन्द्रकी प्रधान दासी मेनका हूँ। दुर्भाग्यवश देवराजने रुष्ट होकर मुझे विसर्जन कर दिया, परन्तु नरलोकमें प्रवेश करते ही आपकी स्वर्ण प्रतिमाने सहसा मेरे हृदयको अपना दास कर लिया।

विश्वा०—कुछ चिन्ता नहीं, देवराजने ऐसी कठोरताका व्यवहार किया है तो कुछ चिन्ता नहीं।

मेनका०—क्या दासीको विपत्तिका समय व्यतीत करनेके लिये अपने चरणोंमें स्थान देंगे?

विश्वा०—मृगलोचनी! मैं तुम्हें अपने हृदयमें सर्वोच्च स्थान दूँगा, कामिनी! स्थिर हो, यदि मैं विश्वामित्र हूँ तो अपने

तपोबलके प्रभावसे तेरे सुखोंके लिये इस मरुभूमिमें स्वर्गके समान सौन्दर्य्य प्रस्तुत करूँगा :—

तपोबनको मैं पलभरमें, यहाँ उपवन बनाऊंगा।
तुम्हें ले स्वर्ग सुखसे भी अधिक आनन्द पाऊंगा॥
अभी अपने तपोबनका, तुम्हें अनुभव कराऊंगा।
इसी बनमें "पुरी" मैं इन्द्रसे बढ़कर बनाऊंगा॥

(विश्वामित्र ताली बजाते हैं, कामदेव चौथा बाण मारते हैं, इसी समय तपोबन उपवनके रूपमें बदल जाता है। मेनका आसकरा उठती है।

विश्वा०—(मेनकासे, हाथ बढ़ाकर) आ मनोहर प्रतिमा ! आओ
इस तपस्वीको आलिङ्गन कर अपना पूर्ण स्नेह सदा दे।
काम ज्वालाके लिये प्रेम वर्षाको मान दे।

(विश्वामित्रका मेनकाको गले लगाना। कामदेवका पचमबाण मारना और दोनोंका हाथ पकड़े परस्पर प्रेमालाप करते हुए प्रस्थान करना।)

दृश्य दूसरा ।

(स्थान – एक वन मार्ग ।

(सुनेत्रा गाती हुई प्रवेश करती है ।)

(*गायन*)

पती पग सेवापर वारी ॥
नरक गामिनी पत्नी सो जेहिं पति पूजा नहीं प्यारी ।
पति पग सेवे सोई सती है, नाहँ तो नार अनारी ॥ पति पग० ॥
मनन करो इस गूढ़ अर्थका प्रभुकी लीला न्यारी ।
"प्रभु पग सेवत पुरुष तरे और पति पग सेवत नारी ॥ पति पग० ॥

सुनेत्रा—(स्वतः) हे प्रभु ! मुझे स्वामी सेवासे वञ्चित रखकर, कर्त्तव्य भ्रष्ट न करो । हा ! युवराजका स्नेह त्याग राज काजका भार त्यागकर, राजधानीसे अग्रसर हुई परन्तु प्राणनाथका दर्शन प्राप्त न हुआ:—

पत्नी पिपासा पूर्ण हो, पति-देव पग परसन करूँ ।
पल पल पुकारूँ हे प्रभु ! पति-देव पग दर्शन करूँ ॥
पाऊँ परस्पर प्रेमसे, पद पुण्य परमानन्दका ।
प्रीतमकी प्रीति पियूषधारा, पानकर हर्षन करूँ ॥

नारद मुनिका गाते हुए आना सुनेत्राका सिर झुकाकर और हाथ जोड़कर सम्मुख खड़ी हो जाना ।

(*गायन*)

शुभ कामोंमें तू परमेश्वर ! सदा सहायक हो मेरा ।
पर उपकार जगतमें कर लूं, दास कहाऊं मैं तेरा ॥
दो बल बुद्धि हृदयकी शुद्धी, वेद विरुद्ध काम नहीं होय ।
पर अपकारी दुष्टाचारी, लोभ मोहमें नाम न होय ॥

नारद—हरिहर, हरिहर, ।

सुनेत्रा—अहोभाग्य । अहोभाग्य । देवराज ! दासीका प्रणाम ग्रहण कीजिये ।

नारद—कल्याण हो, कल्याण हो । रानी सुनेत्रा ! राज कार्यको त्याग तपोवनकी ओर किसकारण अग्रसर हुई हो ? जाओ जाओ, तपोवनमें तुमारा काम नहीं हैं ।

सुनेत्रा—भगवत् ! यह क्यों ? क्या स्वामीके दर्शन न पाऊँगी, उनको कठोर तपस्याके समय उनकी सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त न होगा ?

नारद—(स्वतः) तनिक इसकी पति-भक्तिकी परीक्षा लूँ । (प्रकट) यह सब मैं क्या जानू ! परन्तु मेरे विचारमें विश्वामित्र तुम्हें पत्नी रूपमें स्वीकार करें यह असम्भव है, हरिहर ।

सुनेत्रा—यह क्या कहा, देवर्षि !

नारद—सत्य ही कहता हूँ, तुम जिस पतिके प्रेममें वनके कष्ट उठाकर दर्शनकी आशामें समय व्यतीत कर रही हो, मैं तुम्हारे उस कर्त्तव्य-भ्रष्ट स्वामीको देख आया हूँ ।

सुनेत्रा—(आश्चर्यसे) मुनिवर ! आप क्या कह रहे हैं, तपोनिधिको और यह लाँछन ? कहिये ! कहिये !! वह कहां विराजमान हैं ! मैं इसी क्षण उनका दर्शन करने जाऊँगी ।

नारद—किसका दर्शन करोगी ! कहाँ जाओगी ? जिसने तुम्हारे पवित्र पातिव्रत धर्म्म तथा अपने कर्त्तव्यके उज्वल पटपर कलंक लगाया है ? जिसने अपनेको नरकगामी

बनाया है ! उसके सम्मुख जाकर अपना मान न गँवाओ राजमहलमें जाओ हरिहर, हरिहर ।

सुनेत्रा—देव ! मेरे स्वामीके प्रति आप ऐसी अश्रद्धा क्यों प्रकट कर रहे हैं ?

नारद—इस कारण, कि वह देवराज इन्द्रकी प्रधान अप्सरा मेनका के प्रेममें तन्मय होकर कर्त्तव्यसे विमुख होगया और ऐसे पतितको तू देवता मानती है ?

सुनेत्रा—बस, देवर्षि ! बस, अब मैं अधिक पति-निन्दा श्रवण करना नहीं चाहती । ऐसा कदापि नहीं हो सकता, वे पति हैं, दृढ़ धर्म्म हैं, ऐसा होना सम्भव नहीं और यदि यह सत्य भी हो तो मुझसे क्या सम्बन्ध है ? वे फिर भी मेरे पूजनीय हैं :—

मैं देखूं दोष क्यों उनके ! नहीं अधिकार हैं मेरे ।
मेरे स्वामी मेरे वह देवता, आधार हैं मेरे ॥
सहस्रों दोष हों उनमें, वही शृंगार हैं मेरे ।
वही हैं ईस वही जगदीश, वही करतार हैं मेरे ॥

देवर्षि ! अधिक निन्दा करनेका साहस न कीजिये, जिस स्थान पर मैंने पतिनिन्दा सुनी वह मेरे लिये नरकके समान है । इस कारण मैं यहाँ एक क्षण भी अवस्थान न करूँगी । मुझे आज्ञा दीजिये ।

(सुनेत्रा सर झुकाती है, नारदमुनि आशीर्वाद देते हैं, सुनेत्रा जाती है)

नारद—(स्वतः) धन्य देवी ! धन्य । तू पवित्र पातिव्रत धर्म्मकी

मूर्त्ति है, तू सती है, विश्वामित्र तेरे सतीत्व बलके प्रतापसे संसारमें सर्वोत्तम स्थान पायगा, उसका अकर्म सुकर्मके रूपमें बदलजायँगे यही मेरा आशीर्वाद है।

(गायन)

नार हो तारे अधम पती।
पाती व्रत सम्मुख जयतप क्या! फिरत देवकी मतो ॥ नार हो० ॥
होवे जिसकी भली कामना सोई नार सती ॥ नार हो० ॥

(नारदमुनिका प्रस्थान)

सुनेत्रा—(स्वतः) नहीं सह सकती, नहीं सहसकती। पतिदेवकी निन्दा सुनकर और उनके पतित होनेका समाचार जानकर जीवित नहीं रह सकती। जब स्वामीका उद्धार न हुआ, तो यह अर्द्धाङ्ग अपवित्र रहकर क्या करेगा! (बैठकर हाथ जोड़े हुए) उत्पन्न हो जाओ "अग्निदेव" उत्पन्न हो जाओ, और अपने पवित्र मुखमें इस अपवित्राङ्गकी आहुति ग्रहण करो।

(एकाएक भयंकर शब्द होता है। एकबार अग्नि उत्पन्न होकर शान्त हो जाती है, इसी समय अग्निदेव प्रकट होते हैं। सुनेत्रा प्रणाम करती है।)

अग्नि०—पुत्री! तेरी मनोकामना पूर्ण हुई, मैं होमकुण्डमें आविर्भूत होकर तेरे स्वामीकी आहुति ग्रहण करूँगा। वह पवित्र हैं, उसके सर्वदोष नाश होगये, वह पुनः तपस्या कर अपना उद्धार करेंगे। तुम सती हो, तुमारे सतीत्वबलसे तुमारे स्वामीके सर्व कार्य सिद्ध होंगे। पृथ्वीपर जो रमणी तुम्हारा आदर्श ग्रहणकर अपने स्वामीकी उच्च

कामनाके लिये तुमारी तरह साहाय्य होगी, वह अन्तकाल तक वैकुण्ठ वास करेगी।

सुनेत्रा—पिता! पिता!! आपने दासीको कृतार्थ किया, जन्म मरणसे रहित किया।

सुनेत्रा सिर झुकाती है, अग्निदेव आशीश देते हुए दिखाई देते हैं, परदा गिरता है।

दृश्य चौथा

—:※:—

(स्थान—जंगलका मार्ग)

(आनन्दीका प्रवेश)

आनन्दी—(पेटपर हाथ फेरता हुआ) राम राम, एक लड्डूसे भेंट नहीं, एक पेड़ेसे परिचय नहीं, एक पूरीसे वास्ता नहीं, कचौड़ीसे जान पहचान नहीं, और तो और इस जंगलमें फल फूलसे भी मित्रता नहीं, अब इन उदर देवताको मनाऊँ, तो कैसे मनाऊँ? हाय हाय! महाराज विश्वामित्रको ढूँढ़ने क्या निकला, कि भूखे मरना और पेटपर हाथ फेरते हुए जंगल जंगल भटकना पड़ा, अब क्या उपाय करूँ? न तो महाराज ही का पता चला न पेट हो पला (नेपथ्यकी ओर देखकर) यह कौन! नारद-

मुनि ! बस बस, इनसे पक्का पता चल जायगा, भोजन-
का ठिकाना निकल आयगा ।

(नारदमुनिका गाते हुए प्रवेश)

(*गायन*)

चारो युगका योगी तू ही, चारो दिशा रमाता है ।
चार पदारथ धर्म अर्थ, और काम मोक्षका दाता है ॥
ज्ञाता तेरे हो विरला हो, जो तव ध्यान लगाता है ।
गाता जो गुण परमेश्वरके, परम धाम सो पाता है ॥

आनन्दी—(आगे बढ़कर) देवर्षि ! प्रणाम ।

नारद—कल्याण हो, कल्याण हो । कहो मिश्रजी ! कहाँ भटक रहे हो ?

आनन्दी—क्षुधा-रूपी जंगलमें ।

नारद—क्या क्षुधा लग रही है ?

आनन्दी—जब इतना भी नहीं जानते तब आपको त्रिकाल ज्ञानी क्यों कहा जाता है ?

नारद—(मुसकराकर) मिश्रजी ! तुमारी बाणी सुननेके लिये ही तो प्रायः विश्वामित्रके दरबारमें जाता हूँ । वास्तवमें तुमारे जैसे स्वामी भक्त, विदूषक राज-दरबारोंमें न हों तो शोभा फीकी होजाय ।

आनन्द—आपको भला ऐसी परख क्यों न होगी ! कारण कि यह विदूषक तो एक ही राज दरबारमें रहता है, परन्तु आप तो देवताओंके उज्वल दरबारोंमें प्रति दिन विचरते हैं और इधर उधरका चट्टा बट्टा लगाया करते हैं । दूसरे

चाहे चूल्हेमें जायँ, परन्तु आपका मन बिना किसीकी खटापटी कराये नहीं मानता।

नारद—(हंसकर) मिश्रजी ! अभी तुम मेरे कार्यसे अज्ञान हो :—

खोटा खरा पहचानना ही, बस हमारा काम है।
अच्छा बुरा करते प्रभू, नारद वृथा बदनाम है॥

आनन्दी—कभी नहीं, कदापि नहीं।

नारद—तो क्या में जान बूझकर किसीको कष्ट देता हूँ ?

आनन्दी—इसमें क्या सन्देह है।

नारद—तो इसका प्रमाण दीजिये।

आनन्दी—एक नहीं दो दो लीजिये। पहले तो आपकी पूर्ण कृपा हमारे महाराज विश्वामित्रपर हुई, तो राजा और रानी दोनोंको राज पाट छोड़कर तपोवनमें तप करना पड़ा। दूसरे आपके जानते हुए भी मुझे भूखों मरना पड़ा।

नारद—(हंसकर) तुमने यह रहस्य नहीं जाना, विश्वामित्रको अभी संसारमें बहुत कुछ काम करके देवताओंपर भी अपना प्रभाव जमाना है, उन्हें तपोबलकी शक्ति दिखाना है।

आनन्दी—(आश्चर्यसे) तो देवर्षि ! क्या होगा ?

नारद—होगा क्या ? तुमको भी विश्वामित्रके समान उलटे लटककर तपस्या करनी होगी।

आनन्दी—(उछलकर-भयसे) हैं मुझे तपस्या करनी होगी ! और उलटे लटककर ? (हाथ जोड़) क्षमा करिये, मुझसे ऐसा नहीं होगा।

नारद्—तो फिर विश्वामित्रके संग स्वर्गमें कैसे जाओगे ?

आनन्दी– तो दादा गुरू! मैं नरकमें ही अच्छा हूँ। बस आप कृपा ही करिये और यह बताइये, कि मुझे भोजन कैसे प्राप्त होगा ?

नारद्- (नेपथ्यकी ओर दिखाकर) वह देखो महाराज त्रिशंकू हितको ढूढ़ते हुए आते हैं। उनके पुरोहित बनजाओ। बस जन्मभर भोजन घर बैठे मिलेगा।

आनन्दी—(उछलकर) यह बात है! तब तो बड़ी कृपा होगी।

नारदका चले जाना, चाण्डाल वेशी राजा-त्रिशंकूका आना। और आनन्दीका डरते हुए चिल्ला उठना।

आनन्दी— (चिल्लाकर) अरे बापरे, यह कौन ? (डरता हुआ काँपता है)

त्रि०—-मत डरो, मत डरो, बताओ विश्वामित्र कहां हैं ?

आनन्दी—-मैं नहीं जानता, जाओ कृपा करके उधर ही जाओ, मेरी ओर पैर न बढ़ाओ।

त्रि०—-(उसकी ओर बढ़ता है) अरे मैं राजा त्रिशंकू हूँ, नहीं जानता ?

आनन्द्—तुम्हें जानने वाला कोई लंकामें बसता होगा, कृपा करो मुझे दर्शन न दो!

(आनन्दी आगे बढ़ता है, त्रिशंकू पीछे चलता है)

त्रि०—-ठहरो, मिश्रजी ठहरो,

आनन्दी—-अपना मुँह फेरकर बातें करो।

(दोनोंका प्रस्थान)

दृश्य पांचवां।

(स्थान—एक उपवन)

—:—

(विश्वामित्रका प्रवेश)

विश्वा०—(स्वतः) धिक्कार है मेरे ज्ञान ध्यानपर, धिक्कार है मेरे तपोभिमान पर। आहः! देवराज इन्द्रने धोखा दिया! मेरा तपभंग करनेके लिये घृणित प्रवन्ध किया!! कुछ चिन्ता नहीं, कुछ चिन्ता नहीं, मैं पुनः तपस्याकर अपने पापोंका प्रायश्चित्र करूँगा। भूलगया, भूल गया वशिष्ट-से वदला लेनेका ध्यान भूलगया। मेरे कार्यमें वाधा देनेवाले देवेन्द्र! अब तुमारी अन्य युक्ति काम न आय-गी। इसवार कठोर तपकर ब्रह्मत्व प्राप्त करूँगा, अथवा इस जीवनको ही समाप्त करूँगा।

मेनका अपनी गोदीमें कन्याको लिये विश्वामित्रके सम्मुख आती है। विश्वामित्र देखकर मुँह फेरलेते हैं,

विश्वा०—दूर हो, दूर हो, तपस्वियोंके मार्गमें कण्टक बिछाने वाली मेनका! दूर हो :—

भ्रष्ट तूने कर दिया, अपने कपट व्यवहारसे।

कर दिया मुझको निकम्मा, आह! पापाचारसे।

मेनका—(स्वतः) मेरा कार्य सिद्ध हुआ, अब पश्चात्ताप कर क्या

करोगे ? (प्रकट) कहिये ! कहिये !! अब वह आपकी प्रेम-प्रणाली कहाँ है ? :—

प्रेमका परिणाम तो, अच्छा दिया है प्यारमें ।
कर कलंकित अन्तमें, छोड़ा मुझे संसारमें ॥

विश्वा०—रहनेदे, रहनेदे, वृथा विवाद न बढ़ा, यदि कुशल चाहती है तो अपने देवता इन्द्रके सम्मुख चली जा । जान गया, अपने योगबलसे तेरा कपट प्रेम पहचान गया, जा शीघ्र प्रस्थान कर । मेरी क्रोधाग्नि प्रज्वलित होनेसे प्रथम ही पयान कर ।

(विश्वामित्रका प्रस्थान)

मेनका—(स्वतः) जाओ, जाओ, मुझे पूर्वके सुखोंका अनुभव करनेका छुटकारा होगया, देवराजका विचारा होगया (कन्याको देखकर) परन्तु इस नर-रक्तसे उत्पन्न कन्याको किसकी रक्षामें छोड़ूँ ? यदि देवराज मेरी अकर्त्तव्यताका चिन्ह देख पायँगे, तो निश्चय ही पुरस्कारके स्थानपर मुझे दण्डके योग्य ठहरायँगे । आह ! कामातुर मनुष्यके लोभमें पड़कर मैंने क्या किया ! नरलोकके रसास्वादनने मुझे पतित बना दिया । अब क्या करूँ ? ऐसी सुन्दरी कन्याको कौन पाषाण हृदय माता त्याग सकती है ! (सहसा चौंककर) दूर हो, मृत्यु लोककी ममता ! दूर हो (कन्याका मुंह चूमकर पृथ्वीपर रख देती है और उसीकी ओर देखती हुई) अब तेरी रक्षा वह जगदीश करेंगे । पुत्री ! यदि तू

जीवित रही, तो तुझे देखनेके लिये पुनः मृत्युलोकमें आऊँगी। (आगे बढ़ती हुई फिर सहसा रुककर) यह क्या! यह क्या!! पाँव आगे नहीं बढ़ते। कन्याकी ममता मुझे बाध्य कर रही है, कि तू इसका पालन कर और जबतक यह ज्ञान प्राप्त न कर ले, तबतक इसकी रक्षा कर। क्या मैं अपनी ही सन्तानको हिंसक जीवोंके हवालेकर यहाँसे प्रस्थान करूँ? कोमल हृदयको पाषाण करूँ!! नहीं नहीं, यह राक्षसी व्यवहार उचित नहीं। (सोचकर) परन्तु विशेष समय यहाँ व्यतीत करना भी देवेन्द्रको रुष्ट करनेका कारण होगा। उचित तो यह है, कि एकबार देवराजको उनकी कामना पूर्ण करनेकी शुभ सूचना देनेके लिये इन्द्रलोकको जाऊँ और अपनी सखी सहेलियोंसे विचार कर पुनः कन्याके लिये कोई उचित प्रबन्ध कराऊँ।

(मेनका आकाश मार्गसे प्रस्थान करती है, शकुन्तला नामक पक्षी उड़ता हुआ आता है और अपने पङ्ख फैलाकर पड़ी हुई कन्या पर छाया करके बैठ जाता है। इसी समय एक ओरसे कण्व मुनि प्रवेश करते ही पक्षीकी रक्षामें कन्याको देखकर आश्चर्य करते हैं। पक्षी उड़ जाता है वह कन्याको प्रसन्नता पूर्वक अपनी गोदीमें उठाकर ईश्वरका ध्यान करते हैं।)

कण्व—(कन्याको देखकर) मैं क्या देख रहा हूँ ! एक परम सुन्दरी कन्या और अज्ञान पक्षीके अधिकारमें !! कौन कहता है, कि परमात्मा असहायोंकी सहायता नहीं करता ? धन्य हो प्रभु ! तुम धन्य हो :—

आप ही रक्षक जगत्‌के आप ही आधार हो ।
आपकी लीला वहीं, जहँ सत्यका सञ्चार हो ॥
बाल भी बाँका न होता है, कभी निर्दोषका ।
आपमें नहिं शक्ति तो क्यों भक्ति वश संसार हो ॥

हे जगदाधार ! यह आप हीका कर्त्तव्य है, कि एक साधारण पक्षीकी रक्षामें यह कन्या अबतक जीवित है । अच्छा, जब आपकी प्रेरणासे मैंने आज यह कन्या रत्न प्राप्त किया है, तब मैं अवश्य ही इसका पालन कर सुखों-का अनुभव करूँगा । यदि तुम्हारी कृपासे यह जीवित रही, तो इसका नाम शकुन्तला ही रक्खूँगा । हे दीना-नाथ ! अब इतनी दया करो, कि यह चिरजीवी रहे ।

(कण्व मुनि कन्याको देखकर प्रसन्न होते हैं और उसे गोदीमें खिलाते हुए प्रसन्न चित्तसे प्रस्थान करते हैं ।)
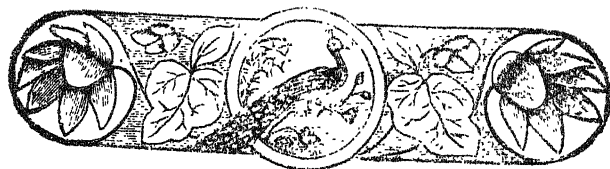
दृश्य-पांचवाँ।

(स्थान—विकट पहाड़ी)

(विश्वामित्र उलटे होकर तपस्या कर रहे हैं, इसी समय एक भयंकर शब्द होता है। ब्रह्मा प्रकट होकर उनके सम्मुख खड़े होजाते हैं, विश्वामित्रका ध्यान भंग होता है और वह सावधान होकर हाथ जोड़े हुए सीधे होकर सम्मुख खड़े होजाते हैं।)

विश्वा०—धन्य हो सृष्टिकर्त्ता! तुम धन्य हो, सेवक दर्शनसे कृतार्थ होगया :—

(ब्रह्मास्तुति)

चतुर वेदको जान, मैं वरण्यो यह चतुर मुख।
धरत चतुर मुख ध्यान, सोय चतुर मुख आप ही॥

ब्रह्मा०—विश्वामित्र! मैं तेरी कठिन तपस्यासे अति प्रसन्न हुआ। वरमांग।

विश्वा०—सृष्टिकर्त्ता! जगत् पिता! मुझे ब्रह्मर्षि होनेका आशीर्वाद दीजिये।

ब्रह्मा०—तुम क्षत्री हो, इस कारण मैं तुम्हें राजर्षिका पद देता हूँ। सन्तुष्ट हो, तुम्हारा तपोबल ब्रह्मर्षिके समान ही होगा।

(ब्रह्मा आशीर्वाद देकर अन्तर्द्धान होजाते हैं, विश्वामित्र चौंककर खड़े रह जाते हैं।)

विश्वा०—इतनी घोर तपस्यापर भी राजर्षिका वरदान। ब्रह्माद्वारा भी अपमान! नहीं नहीं, यदि वशिष्ठने अङ्गीकार न किया

तो पुनः तपस्या करूँगा। इसबार सारा ब्रह्माण्ड हिला दूँगा, पृथ्वीको डगमगा दूँगा। शेष नागकी शय्यापर सोये हुए विष्णु भगवानको जगा दूँगा। जाता हूँ, जाता हूँ, वशिष्ठको ब्रह्मत्व स्वीकार कराता हूँ। यदि नहीं माना तो उसको विध्वंसकर पुनः तपस्यामें लग जाता हूँ।

(विश्वामित्र जाना चाहते हैं। इसी समय दौड़ा हुआ भयभीत आनन्दी आता है और हाथ जोड़कर विश्वामित्रके सम्मुख काँपता हुआ खड़ा हो जाता है।)

आनन्दी—महाराज ! रक्षा करिये, चलिये भागिये, दौड़िये...

विश्वा०—अरे आनन्दी ! क्या हुआ, कहाँसे आया है ?

आन०—आपकी खोजमें आया हूँ। परन्तु वह देखिये आ रहा है। चलिये चलिये, यह राक्षसोंका बन है, वह आया। बचाइये, मुझे बचाइये।

विश्वा०—अरे मूर्ख ! डरता क्यों है ? सावधान रह !

(आनन्दी उनके पीछे छिप जाता है, त्रिशंकु आता है और हाथ जोड़कर सम्मुख खड़ा हो जाता है।)

त्रि०—रक्षा करिये, मित्र त्रिशंकुकी रक्षा करिये। चाण्डालत्वसे मुक्त करिये।

विश्वा०—कौन ! राजा त्रिशंकु ! न घबड़ाओ मित्र ! तुम्हारा चाण्डालत्व नाश हुआ।

त्रि०—(अपनी ओर देखकर, मुँहपर हाथ फेरकर और हाथोंकी ओर देखता हुआ) उपकार मित्र ! आपने बड़ा उपकार किया। मैं चाण्डालत्वसे मुक्त हुआ, धन्य हैं, धन्य हैं।

विश्वा०—त्रिशंकु मित्र ! मैं तुम्हारी आत्मकथा श्रवणकर चुका हूँ और उस अभिमानी वशिष्ठसे अपने साथ ही तुमारा भी बदला लूँगा, उसका शिरच्छेदन करूँगा और तुमारी मनोकामना पूर्ण करनेके लिये मैं तुम्हें सदेह स्वर्गवास कराऊँगा। तुम्हें अपना तपोबल दिखाऊंगा। जाओ, यज्ञका प्रबन्ध करो। मैं तुम्हारा यज्ञ सम्पूर्ण कराऊँगा।

त्रि०—मिल गया, जीवनका मार्ग मिल गया, हर्षसे हृदय हिल गया। फलवती ! हे मित्र ! तुम्हारी तपस्या फलवती हो।

विश्वा०—बन्धु ! जिस समय कन्नौजमें भारी दुर्भिक्ष पड़ा था; उस समय मेरे परिवारके साथ तुमने जो सहानुभूति दिखायी है और जो कुछ उपकार मेरी प्रजाके साथ किये हैं, मैं उसका बदला चुकानेके योग्य नहीं हूँ। आपने मित्रता-का पूर्ण परिचय दिया।

त्रि०—अब विशेष लज्जित न करिये, चलिये पधारिये।

(दोनोंका प्रस्थान आनन्दीका प्रवेश)

आनन्दी—हमारे महाराजका यह प्रभाव ! वाहवाह ! वाहवाह ! अब तो जन्म भरके भोजनका वर इन्हींसे लेलूँ। चलूँ। यज्ञमें मैं भी चलूँ, पेटभर भोजन मिलेगा, न कहीं हाथ पैर हिलेगा।

(आनन्दीका प्रस्थान।)

दृश्य-छठवाँ

(स्थान—पुष्पोद्यान)

(देवराज इन्द्र तथा ब्रह्माका प्रवेश)

इन्द्र—सृष्टिकर्त्ता ! क्या देवताओंका अपमान करनेके लिये ही विश्वामित्र चाण्डाल त्रिशंकुको सदेह स्वर्ग भेजनेका प्रयत्न कर रहा है ?

ब्रह्मा—वास्तवमें यह विषय विचारणीय है ।

इन्द्र—परन्तु मैं कदापि उसे ऐसा करने नहीं दूँगा, इसमें देव-लोकका अपमान है ।

(नारदमुनिका गाते हुए प्रवेश)

(*गायन*)

जबतक पुण्य पूर्व जन्मोंका, जीवनमें लहराता है ।
तबतक ईश्वर भाग्य उदयके, झण्डेको फहराता है ॥
मत अभिमानमें भूलो, ऐसा समय सदा नहिं आवेगा ।
पर उपकार जगत्‌में कर लो, संग तुमारे जावेगा ॥

नारद—क्यों देवराज ! सोचमें क्यों पड़ गये ?

इन्द्र—देवर्षि ! आप जानते हुए भी यह क्या कह रहे हैं ! आपकी उपस्थितिमें एक चाण्डाल सदेह स्वर्ग जायगा ? फिर आपका मान क्या रहने पायगा !

नारद—इसमें मैं क्या कर सकता हूँ ? पिताजीने तो विश्वामित्र-को राजर्षि होनेका वरदान दिया है और अग्निदेवने उसकी आहुति ग्रहण करनेका भार लिया है ।

ब्रह्मा—उसकी अखण्ड तपस्या उसकी शक्तिको बढ़ा रही है।

इन्द्र—परन्तु मैं नहीं सहन कर सकता, मेरी उपस्थितिमें वह मन-माना कार्य नहीं कर सकता।

नारद—देखना देवराज! जरा सोच विचार कर विश्वामित्रके कार्यमें बाधा देना।

इन्द्र—सब कुछ विचार चुका हूँ, अब पहले विष्णुलोककी ओर जाकर यह समाचार सुनाता हूँ और उन्हींसे उपाय पूछकर त्रिशंकुको स्वर्गसे मृत्युलोकमें गिराता हूँ।

ब्रह्मा—यही उचित है, चलिये विष्णुलोककी ओर अग्रसर हों।

(ब्रह्मा तथा इन्द्रका प्रस्थान)

नारद—(स्वतः) जाओ देवराज! जाओ, परन्तु विश्वामित्रके सम्मुख तुम्हें नाचना ही पड़ेगा। वह सब कुछ करेगा, जब अपने हठपर अड़ेगा। और मैं भी तनिक यज्ञमण्डपकी ओर चलूँ और देवताओंकी लीला देखूँ। चाहे तो त्रिशंकु सवदेह स्वर्ग ही जायगा अथवा देवताओंका नियम ही देवताओंको अच्छी तरह इधरसे उधर नचायगा। इसबार पूरा ही आनन्द आयगा।

(नारदमुनिका प्रस्थान, सुनेत्राका प्रवेश)

सुनेत्रा—(स्वतः) नहीं है, नहीं है, मेरे भाग्यमें स्वामीका दर्शन बदा नहीं है। अच्छा, जो इच्छा भगवानकी।—मैं हृदयेश्वरके चरणोंका ध्यान करती हुई उनकी कामनायें पूर्ण होनेतक अपना समय वनमें ही बिताऊँगी। स्वामी! आप निर्भय

होकर अपना कार्य सिद्ध करो, मैं तुमारी मंगल कामनाके लिये सदैव हरिसे प्रार्थना करती हूँ :-

ध्यान करो गुण गान करो, बहुज्ञान करो निज मान बढ़ाओ।
तब होय विजय, शुभ होय समय, प्रभुदेयँ अभय, हरिध्यान लगाओ
बलतेज बढ़े, जग नाम पढ़े, दुःख भूमि गड़े, सुख शान्ति समाओ।
नवनिद्धि करो, दशसिद्धि करो, तप वृद्धि करो, ऊँचा पद पाओ॥

(सुनेत्राका प्रस्थान)

दृश्य-सातवाँ

(स्थान—अयोध्यामें यज्ञमण्डप।)

(बीचमें होमकुण्ड जल रहा है, विश्वामित्र आहुति दे रहे हैं, उनके समीप ही महाराज त्रिशंकू बैठे हैं, एक ओर प्रधान, दरबारीगण, युवराज हरिश्चन्द्र, रानी इत्यादि तथा नारद बैठे हैं एक ओर ब्राह्मण तथा साधुओंका दल बैठा है, होमकुण्डके समीप ही पुरोहित तथा आनन्दी बैठे हैं।)

विश्वा०—(हाथमें आहुति लेकर) महाराज त्रिशंकू ! सावधान, इसबारकी आहुतिपर आप स्वर्ग पयान करेंगे। मंत्र पढ़ना—"सदेह स्वर्गवास, स्वाहा......

(त्रिशंकु हाथ जोड़कर खड़े होजाते हैं, विश्वामित्र आहुति देते हैं। त्रिशंकु आकाश मार्गसे स्वर्ग यात्रा करते हैं, राजर्षि विश्वामित्रकी जयध्वनि होती है, सब आकाश मार्गकी ओर देखा करते हैं।)

साधुगण :—धन्य, विश्वामित्र धन्य।

नारद—परन्तु वह देखो, इन्द्र देव त्रिशंकुको स्वर्ग द्वार तक पहुंचने नहीं देते।

(इसी समय आकाश मार्गसे आवाज आती है)

शब्द—"रक्षाकरो, राजर्षि ! रक्षा करो। देवराज इन्द्र मुझे मृत्यु लोकमें फेंक रहे हैं,—रक्षा करो, मेरी प्राण रक्षा करो।

(त्रिशंकु आकाश मार्गसे उलटा गिरता है)

विश्वा०—(हाथ उठाकर) स्थिर हो, स्थिर हो।

(त्रिशंकु अधबीचमें उलटा होकर खड़ा रहता है।)

नारद—क्यों विश्वामित्रजी ! अब आपका तपोबल कहाँ है ?

विश्वा०—अभी दिखाता हूँ, अभी दिखाता हूँ।

रानी—(हाथ जोड़कर व्याकुल होती हुई) राजर्षि ! मेरे स्वामीको पृथ्वीपर ही अवतरण करने दीजिये। आहः ! वह बड़ा कष्ट पा रहे हैं।

(विश्वामित्र हाथ उठाकर एकबार फिर नीचा करते हैं। महाराज त्रिशंकु पृथ्वीपर आजाते हैं, सब आश्चर्य करते हैं।)

विश्वा०—नारद मुनि ! देखो, इस वार अच्छी तरहसे देखो। अब मैं महाराज त्रिशंकुको ही इन्द्रत्व और इन्द्रासन देता हूँ।

नारद—जब स्वर्ग ही प्राप्त न होसका तो इन्द्रत्व कैसा ?

विश्वा—वह भी देखलो, मैं यहां नवीन स्वर्ग निर्माण करूँगा। (आहुति लेकर) 'माता वसुन्धरे! आहुति ग्रहणकर। अपने वक्षस्थलपर, फल, पुष्प, लता पत्र भाँति भाँतिके सुन्दर वृक्ष धारणकर पृथ्वीको स्वर्ग श्रेष्ठ रूपमें धारण करो। स्वाहा।

(इस समय स्वर्गके समान मनोहर दृश्य पृथ्वीपर प्रकट होता है। लता पत्र बेल पुष्प इत्यादि भांति भांतिके वृक्ष इत्यादि उपजते हैं सब देखकर आश्चर्य करते हैं।)

आनन्दी—धन्य हो राजर्षि धन्य हो। परन्तु ब्रह्माके समान नरनारि तथा स्वर्गके सामान देवता भी तो होने चाहिये।

नारद—वह सब राजर्षिकी समताके बाहर है।

विश्वा—नहीं, वह भी लो। ब्रह्माजी तो गर्भ द्वारा जन्म देते हैं, परन्तु मैं गर्भवासका कष्ट न देकर वृक्ष द्वारा समय समयपर उत्पन्न करूँगा और एक ही साथ सहस्रों जन्मलेंगे (आहुति लेकर) पृथ्वी माता! मेरी आहुति ग्रहणकर अपने वक्षस्थलपर ऊँचा वृक्ष धारण करो-स्वाहा...

(एक ऊंचा वृक्ष उत्पन्न होता है)

विश्वा—(आहुति लेकर) इस वृक्षमें सुन्दर फल हों-स्वाहा।

(वृक्षमें फल उत्पन्न होते हैं)

विश्वा—(आहुति लेकर) इन फलोंका नाम नारियल हो और यही नरनारी रूपमें प्रकट होकर जीव धारण करें—स्वा...

(इसी समय एक-भयंकर शब्द होता है और ब्रह्मा प्रकट होते हैं सब सर झुकाते हैं।)

ब्रह्मा—ठहरो! ठहरो!! राजर्षि! ठहरो। ऐसा अनर्थ न करो, मैं लोक पितामह हूँ। मेरा अपमान करनेके हेतु मानव मानवी उत्पन्न न करो।

विश्वा—प्रभो! आपकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं कर सकता। परन्तु इन्द्रदेवका गर्व अवश्य चूर्ण करूँगा। नवीन इन्द्रपुरी निर्माणकर महाराज त्रिशंकुको इन्द्रत्व दूँगा। फिर देखूँगा, देवराज क्या करते हैं।

ब्रह्मा—वत्स! तुमारे तपोबलके प्रभावसे असम्भव भी सम्भव हो सकता है। परन्तु ईश्वरी नियमोंको भंग करना तुम्हें उचित नहीं। इससे देवलोकका अपमान होगा।

विश्वा—परन्तु मेरा सङ्कल्प वृथा जाना भी तो असम्भव है।

ब्रह्मा—तो मैं राजा त्रिशंकुको सदेह स्वर्गबास करानेके हेतु उपस्थित हूँ।

विश्वा—नहीं नहीं, मैं इन्हें इन्द्रत्व देना स्वीकार कर चुका हूँ। इस कारण मैं पृथ्वीपर ही इन्द्रपुरी निर्माणकर इन्हें इन्द्रत्व प्रदान करूँगा।

ब्रह्मा—यह भी सम्भव है, तुमने देवलोकका मान रखा। इस कारण मैं आशीर्वाद देता हूँ, तुम्हारा कल्याण हो।

(ब्रह्माका अन्तर्द्धान होना)

विश्वा—(चौंककर) भूल, भयानक भूल। आहः! मैंने यहीं ब्रह्मत्व क्यों न प्राप्त कर लिया! अच्छा, कुछ चिन्ता नहीं। महाराज त्रिशंकु! आओ, मेरे संग आओ। मैं तुम्हें इन्द्र और

तुमारी सत्यवती रानीको इन्द्राणी बनाऊँगा। नवीन इन्द्रपुरीमें तुम्हें इन्द्रासनपर बैठाऊँगा और फिर तपस्या-में लीन होकर अपनी इच्छा पूर्ण करूँगा। वशिष्ठका गर्व खर्व करूँगा।

(सब राजर्षि विश्वामित्रकी जयध्वनि करते हैं। आगे आगे विश्वामित्र उनके पीछे त्रिशंकु तथा रानी और फिर नियमानुसार सब प्रस्थान करते हैं।)

ड्रापसीन

तीसरा अङ्क

दृश्य-पहला

(स्थान—एक वनमार्ग)

——:——

(सुनेत्राका प्रवेश)

(गायन)

कब मिलि हौ प्राण अधार ! ॥
भटकत हूँ तुमरे दर्शनको, धर धीरज मनमार ॥ कब० ॥
सहन वियोग होत नहिं अब तो कृपा करो करतार ! ॥कब०॥

सुनेत्रा—(स्वतः) प्राणाधार ! कहां हो ? क्या दासी आपके पग परसनसे वञ्चित ही रहेगी ! नहीं नहीं, ऐसे कठोर न बनो । हा ! क्या आपको कर्म-पथसे विमुख करनेके लिये किसीने आपका ध्यान भंग किया । हाः ! अब क्या उपाय करूँ ? किस प्रकार आपका दर्शन प्राप्त करूँ ? आओ आओ भगवती ! स्वामीकी रक्षा करनेमें मुझे सहाय प्रदान करो ।

(योगमायाका प्रवेश और आशीर्वाद)

योग०—पुत्री ! शंकाको दूर करो । तुम्हारे स्वामीने अपने तपोबलके प्रभावसे देवताओंको लज्जितकर दिया है । नवीन इन्द्रपुरी

निर्माणकर महाराज त्रिशंकुको पृथ्वीपर इन्द्रासन दिया है और अब ब्रह्मत्व प्राप्त करनेके हेतु घोर तपस्यामें लीन हैं।

सुनेत्रा — धन्य हो मातेश्वरी! धन्य हो। आपने यह शुभ समाचार सुनाकर कृतार्थ किया; परन्तु जगदम्बे! क्या मुझे स्वामी-का दर्शन प्राप्त न होगा?

योग०—अवश्य होगा, निःसन्देह होगा, परन्तु अभी विलम्ब है, आओ मैं तुमको उनके तपोबनका मार्ग बता दूँ।

सुनेत्रा —उपकार भगवती! आपका उपकार।

(दोनोंका प्रस्थान)

दृश्य-दूसरा

पहाड़ी

(स्थान—तपोबन)

विश्वामित्र समाधि लगाये बैठे हैं, इसी समय कुछ अप्सरायें आती हैं और उनके सम्मुख नृत्य गीत करती हैं।

(*गायन*)

काम बानसे हारेको अब फिरसे पतित बनाना है।
देवराजको अपने बल और गुणकी शक्ति दिखाना है॥
जय तप सत्कर भग इसे अब मायामें उरझाना है।
धूम-क्रिगम-तक धा-धा-धिता, मोहन मंत्र जगाना है॥

(अप्सरायें नाचती हुई, अन्तिम नृत्य करती हैं। विश्वामित्रका ध्यान एका एक भंग होता है और वह क्रोधमें उठ कर अप्सराओंकी ओर देखकर क्रोधसे कम्पायमान होते हैं।)

विश्वा०—क्या इन्द्रने पुनः मुझे पतित करनेका विचार किया है ! अच्छा इसबार तपस्वियोंका तप भंग करने वाले उसके अप्सरा रूपी यन्त्रोंको ही निर्मूल करता हूँ (अप्सराओं-ओर देखकर) ओ स्वार्थ साधनकी निर्लज्ज मूर्तियो ! तुम पाषाण हो जाओ। तुमें कोई देव दानव ऋषि मुनि देवी दानवी इस दण्डसे मुक्त न करसके।

(विश्वामित्र क्रोधमें भरे प्रस्थान करते हैं। अपसरायें चिल्लाती हुई पत्थर होकर स्थिर होजाती हैं। इन्द्र व्याकुल हुए आते हैं।)

इन्द्र—(स्वतः) महा अन्धेर, अनर्थ, भयानक परिवर्त्तन, अब मेरे शृंगार रसकी इन पवित्र मूर्त्तियोंका उद्धार होना असम्भव है, क्या उपाय करूँ !

(इन्द्र सोंचमें पड़कर खड़े रहते हैं। नारद आते हैं)

नारद—(मुसकराते हुए) कौन देवराज !

इन्द्र—(चौंककर) देवर्षि ! नमस्कार।

नारद—मंगल हो, कहिये क्या सोंचमें पड़े हैं ?

इन्द्र—देवर्षि ! अब वृथा लज्जित न करिये और अप्सराओंका उद्धार करनेके लिये कोई उपाय बताइये।

नारद—(हंसते हुए) कृपाकर विष्णुलोकमें विष्णु भगवानके पास जाइये।

इन्द्र--परन्तु विश्वामित्रके शापके अनुसार तो इनका मुक्त होना कठिन है। वह क्या उपाय स्थिर करेंगे ?

नारद--नहीं तो फिर इन्द्रपुरीमें बैठकर मंगल गाइये।

इन्द्र--नहीं, नहीं देवर्षि! उपहास न करिये। आपके अतिरिक्त ऐसे अवसरपर और कोई उपाय स्थिर नहीं कर सकता। आप चौदहों लोक की परिक्रमा करते हैं। बताइये! बताइये !! ऐसा शक्तिशाली कौन है जो इनका उद्धार कर सके ?

नारद--मेरे विचारमें तो कोई उपाय नहीं हैं। परन्तु वह देखो विश्वामित्रकी अर्धाङ्गिनी सती सुनेत्रा आती है, यदि वह पाषाण रूप धारणकर इनका उद्धारकरे तो सम्भव है कि अप्सराओंका उद्धार हो। पातिव्रतका बल सब कुछ कर सकता है :—

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता, भर्त्रा भार्य्या तथैवच।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥

(नारदमुनिका प्रस्थान)

इन्द्र—(स्वतः) सत्य है, सत्य है। पतिव्रता नारीमें सर्व शक्ति है (नेपथ्यकी ओर देखकर) हां, अब यत्नसे काम करना चाहिये।

(इन्द्र एक ओर चले जाते हैं, सुनेत्रा आती है।)

सुनेत्रा –(स्वतः) यही है वह शोभायमान तपोवन, परन्तु स्वामी तो कहीं भी विराजमान नहीं है! हा! क्या प्राणनाथ-का दर्शन इस जन्ममें नहीं होगा ?

इन्द्र—(निकलते हो) अवश्य होगा। यदि देवराज इन्द्रकी कामना पूर्ण होगी तो तुम्हारा कार्य अवश्य सिद्ध होगा।

सुनेत्रा—(चौंककर) कौन देवराज इन्द्र भगवान! (सर झुकाकर)

इन्द्र—(आशीर्वाद देते हुए) कल्याण हो, सौभाग्यवती हो।

सुनेत्रा—अहोभाग्य, अहोभाग्य, जिनका दर्शन प्राप्त करनेके हेतु तपस्वी तपस्या करते हैं, योगी योग रमाते हैं परन्तु फिर भी यह दुर्लभ समय नहीं पाते हैं, वह सुअवसर अनायास ही इस तुच्छ जीवको प्राप्त हुआ! मैं धन्य हूँ।

इन्द्र—सती! तुमारे पास वह शक्ति है, कि जिसके प्रतापसे तुम्हें सब कुछ प्राप्त हो सकता है। कहो, क्या इच्छा है?

सुनेत्रा—यदि ऐसा ही होता तो क्या स्वामीका दर्शन न प्राप्त होता! भगवन! मुझे केवल हृदयेश्वरका दर्शन प्राप्त करनेका आशीर्वाद दीजिये।

इन्द्र—इसका एक ही उपाय है, यदि तुम एकबार पाषाण होकर इन्द्र लोककी इन सब अप्सराओंका उद्धार करो तो मैं तुम्हें विश्वामित्रका तपोबन बता दूंगा। तुमारी इच्छा पूर्ण करूँगा।

सुनेत्रा—स्वामीका दर्शन प्राप्त करनेके हेतु मैं कठिनसे कठिन और असाध्य कार्य करनेके लिये भी प्रस्तुत हूँ।

इन्द्र—तो तुमारा कल्याण होगा।

(सुनेत्रा पत्थरकी मूर्त्तियोंके समीप जाती है)

सुनेत्रा—प्रभू! यदि मैंने सत्यव्रत पालन किया है तो इन अप्सरा-
ओंका उद्धार करो और मुझे पाषाण होनेका वरदान दो।

(इसी समय सुनेत्रा पाषाण हो जाती है, सब अप्सराओंका उद्धार
होताहै, अप्सरायें सब एक साथ हाथ उठाकर सुनेत्राको
आशीर्वाद देती हैं।)

इन्द्र—धन्य हो सती! तुम धन्य हो, अहा:! सतीत्वका कैसा
तेज होता है!

(इन्द्र सुनेत्राके समीप जाकर उसपर हाथ धरते हैं। सुनेत्रा सचाधान
होकर सीस झुकाती है। इन्द्र आशीर्वाद देते हैं।)

(परदा गिरता है)

दृश्य-तीसरा

(स्थान—वनमार्ग। आनन्दीका प्रवेश)

आनन्दी—(स्वतः) हं: हं: हं: हं: हमारे राजर्षि भी परमात्मा जाने
सारी पृथ्वीकी परिक्रमाही कर डालेंगे, जिस प्रकार
पक्षी एक डालसे दूसरी डाल पर जा बैठते हैं, उसी
प्रकार वह भी एक तपोवनसे दूसरे तपोवनमें जा घुसते
हैं, न जाने कब ब्रह्मत्व प्राप्त होगा और कब यह शान्त
होंगे! इससे भला तो यह होता कि मैं राजधानीमें ही
रहता, परन्तु यह बनबन भटकनेका कष्ट और क्षुधाकी

पीड़ा तो न सहता ! किसी अन्य धनवान यजमानके घर आसन जमाता तो भला प्रतिदिन कुछ न कुछ तर माल तो पेटमें जाता ! यहां तो बावन डंड एकादशी लगी रहती है और क्षुधा देवी बार बार लड्डू और पेड़ेको चाहती है। अब क्या उपाय करूँ ! न तो महारानी सुनेत्राका पता पाया, न तपोवनमें पुनः राजर्षिका ही दर्शन। (चौंककर) बस, इसबार यदि राजर्षिको देख पाऊंगा तो अवश्य ही नारदमुनिके कहनेके अनुसार उन्हींके समीप मैं भी उलटा लटककर तपस्यामें ध्यान लगाऊंगा। जब हमारे महाराजमें इतनी शक्ति है, कि उन्होंने नवीन सृष्टि रच डाली तो क्या मैं एक भोजनालय न निर्माण कर सकूंगा। (आप ही) अवश्य कर सकूंगा, निःसन्देह कर सकूँगा।

(आनन्दी जाना चाहता है। फिर सहसा नेपथ्यको ओर देखकर रुक जाता है और आश्चर्यसे देखता है, इसी समय सुनेत्रा आती है और उसे देखकर रुक जाती है।)

आनन्दी—(चौंककर) कौन महारानी ! (सर झुकाता है,)

सुनेत्रा—कौन आनन्दी मिश्र !! हैं तुम कहां ?

आनन्दी—आपको खोजते आज कई वर्ष होगये। धन्य भाग्य हैं जो आपका दर्शन हुआ। महारानी ! आप क्यों इतना कष्ट उठा रही हैं, इस भयानक वनमें किस प्रकार अपना समय बिता रही हैं ?

सुनेत्रा—स्वामीके दर्शनकी अभिलाषासे।

आनन्दी—क्या आपसे साक्षात नहीं हुआ? धन्य हो सती, धन्य हो।

सुनेत्रा—क्या तुमने कहीं देखा?

आनन्दी—मैं तो उन्हींके संग था। परन्तु कुछ वर्षोंसे फिर उनका दर्शन प्राप्त न हुआ। मैं भी उन्हींके लिये व्याकुल हो रहा हूँ।

सुनेत्रा—क्या कहीं भी पता नहीं मिला?

आनन्दी—नहीं, परन्तु एक तपोवन निकट ही है, अब वहीं जानेका विचार है।

सुनेत्रा—तो आओ, मैं भी तुमारे संग उसी ओर प्रस्थान करूंगी, देवराज इन्द्रने भी यहीं किसी तपोवनमें उनकी समाधिका स्थान बताया है।

आनन्दी—और मैंने नारदमुनिसे भी यहींका पता पाया है।

सुनेत्रा—मेरा अन्तरात्मा भी साक्षी देता है, कि इसबार अवश्य ही उनका दर्शन प्राप्त होगा।

(दोनोंका प्रस्थान)
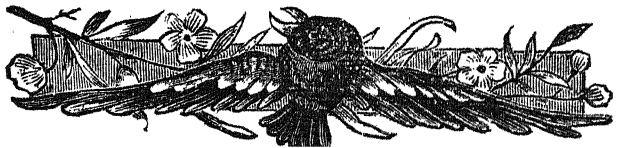
दृश्य-चौथा

———:———

(स्थान—वनमार्ग)

(विश्वामित्र तथा वशिष्ठका प्रवेश)

विश्वा०—क्या अभी भी तुमको सन्देह है, कि मैंने ब्रह्मत्व प्राप्त नहीं किया ?

वशि०—सन्देह किञ्चित भी नहीं।

विश्वा०—फिर क्या कारण है, कि तुमने मुझे ब्रह्मर्षिके नामसे सम्बोधन नहीं किया ?

वशि०—यह मेरी इच्छा है और इसके अतिरिक्त तुममें ब्रह्मत्वका लेशमात्र भी नहीं है।

विश्वा०—इतना अहंकार ?

वशि०—केवल तुमको तुमारी योग्यता दिखानेके लिये।

विश्वा०—क्या सत्य ही मुझे ब्रह्मर्षि नहीं मानते ?

वशि०—नहीं।

विश्वा०—कारण ?

वशि०—कारण यहीं है, कि तुम ब्राह्मण नहीं।

विश्वा०—तो कबतक मुझे ब्रह्मर्षि स्वीकार न करोगे !

वशि०—जबतक तुममें ब्राह्मणका लक्षण न होगा।

विश्वा०—देखो, इस वृथा विवादके कारण मैं आपका घोर अनिष्ट कर सकता हूँ। क्या जानते हो ?

वशि०—एक अनिष्ट तो कर चुके। मेरे शतपुत्रोंका विनाश तो कर चुके।

विश्वा०—जो होतव्य था सो हुआ। अब उसका सोच करना वृथा है। मुझे उसके लिये क्षमा करो; परन्तु मुझे ब्रह्मर्षि स्वीकार करो।

विश०—क्षमा तो कर ही चुका; परन्तु असत्यको सत्य नहीं मान सकता।

विश्वा०—फिर भी बार बार हठ करते हो! जानते नहीं, कि मैंने ब्रह्माजीसे जो शक्ति प्राप्त की है, उसीके द्वारा तुम्हें वध कर सकता हूँ।

वशि०—यदि ऐसी इच्छा है तो वही करो, परन्तु ब्रह्म वाक्य अटल है।

बिश्वा—मैं तुमारे कल्याणके लिये ही कहता हूँ, कि मेरी उपेक्षा अधिक न करो। अन्यथा मैं मारण यज्ञ कर तीनवार आहुति दूंगा और तुमारा मस्तक ततक्षणात ही उतर कर अग्निकुण्डमें जा पड़ेगा। यदि बार-बार मेरी अवज्ञा करोगे तो यही करूंगा।

वशि०—मैं शास्त्रके वशीभूत हूं कुछ तुमारे नहीं। इस कारण शास्त्रकी मर्य्यादाको तोड़कर तुमें ब्राह्मण स्वीकार नहीं कर सकता। मृत्युसे भयभीत होना क्या?

विश्वा०—तो मैं निश्चय ही तुम्हारे कारण यज्ञ करूँगा।

वशि०—तुम जो इच्छा हो, वही करो।

विश्वा०—अच्छा, तुम मेरा ब्रह्मत्व स्वीकार नहीं करते तो हमारे पुरोहित होना स्वीकार करो।

वशि०—अवश्य करूँगा। मैं पुरोहित बनकर तुमारा यज्ञ सम्पूर्ण कराऊँगा, तुम मुझे पुरोहित स्वीकार करते हो तो मैं तुम्हारी उपेक्षा नहीं कर सकता।

विश्वा०—तो मैं कल ही यज्ञारम्भ करूंगा। यदि तुम उपस्थित न हुए तो मैं तुम्हें मिथ्यावादी कहकर पुकारूंगा और यथाशक्ति तुमारी निन्दा करूँगा।

वशि०—ब्रह्म वाक्य मिथ्या नहीं हो सकता। मैं अवश्य तुमारा यज्ञ सम्पूर्ण करूंगा।

(वशिष्ठका प्रस्थान)

विश्वा०—(स्वतः) देखूंगा, देखूंगा। तुमारा ब्रह्मत्व। बस जब तुमने ब्रह्माके दिये वरदानको स्वीकार नहीं किया तो मैं भी तुम्हारा मुण्डच्छेदन करूंगा। जाता हूँ जाता हूँ और तुम्हारे लिये मारण यज्ञ रचता हूँ।

(विश्वामित्रका प्रस्थान)

दृश्य-पाचवां

(स्थान—एक कुटी)

(वशिष्ठ तथा अरुन्धतीका प्रवेश)

अरुंधती—प्रभो ! क्या विश्वामित्रके मारण यज्ञमें प्रस्थान करते हैं ?

वशिष्ठ—साध्वी ! तुम इतनी आतुर क्यों हो रही हो ?

अरुन्धती—प्राणनाथ ! कुछ विचार करिये। आप ही के लिये यज्ञ हो और आप पुरोहित बनें। तिसपर आपकी अर्धाङ्गिनीके हृदयमें क्या कष्ट हो रहा है इसका अनुमान कीजिये। कृपाकर उनको ब्रह्मर्षि स्वीकार करिये। इसीमें सब विघ्न दूर हो जायँगे। जब साक्षात ब्रह्माने बरदान प्रदान किया है तो आप जान बूझकर अपना प्राण गवानेका अनुचित विचार न करिये। भगवन् ! इस अबलापर आघात करनेके लिये क्यों प्रस्तुत हो रहे हैं ? बताइये इस पुत्र शोकातुराको कौन प्रबोध देगा, अपने स्वामीको मृत्यु मुखके सम्मुख उपस्थित होनेके समय मैं किस प्रकार धैर्य्य धारण करूँगी। मुझे आजन्म इन श्रीचरणोंकी सेवाके अतिरिक्त और क्या इच्छा है जो मैं जीवित रहकर करूँगी ! क्या मेरा इतना अधिकार भी मेरे हाथसे छीन लिया जायगा ?

वशिष्ठ—प्रिये ! अपने शत पुत्रोंके विनाश होनेके समय जिस प्रकार तूने मुझे उपदेश दिया था, क्या वह भूल गई ? बचनबद्ध

होकर तथा महर्षि विश्वामित्रका पौरोहित्य स्वीकारकर ब्रह्मत्वका नियम भंग करना योग्य नहीं! इस ब्राह्मणका मृत्यु क्या सम्भव है! नहीं, मैं जिस समय विश्वामित्रके सम्मुख जाऊँगा उसी समय उसका अभिमान नष्ट होगा और वह लज्जित होकर ब्राह्मणको क्षमा शक्तिको देखेगा। यदि केवल मेरे शरीरान्तसे विश्वामित्रको शिक्षा लाभ हो तो मैं सहस्रवार शरीर त्यागकर उसे शिक्षा दूँगा। ब्राह्मणने शिक्षा दान करनेको ही जन्म धारण किया है।

अरुन्धती—हृदयेश्वर! मैं आपकी आज्ञा—आपके विचार नहीं टाल सकती; परन्तु मुझे धैर्य धारण करनेका कोई उपाय बताइये। अन्यथा हृदयपिञ्जर भेदकर प्राण निकलनेमें विलम्ब नहीं होगा। पर धैर्य कहांसे होगा? पति ही धैर्य है, पति ही जीवन है। पति ही प्राण है, मैं इस समय अधीर हो रही हूँ। मुझे धैर्य धारण करनेकी शक्ति प्रदान करिये।

वशि०—केवल नारायणका आश्रय ही एक मात्र उपाय है और गायत्री माता सहायक हैं।

अरु०—परन्तु परमात्माकी मूर्त्ति तो आप ही स्वयं मेरे सम्मुख विराजमान हैं, मेरे हृदय मन्दिरमें अन्य किसी परमेश्वरकी मूर्त्ति स्थान नहीं पा सकती। मेरे लिये आप ही नारायण हैं।

(अप्रत्यंन्तीका वेगसे प्रवेश)

अप्र०—पिता ! पिता !! आप कहां प्रस्थान कर रहे हैं। पति हीन अपनी असहाय पुत्रवधुको त्यागकर कहां जा रहे हैं ? पिता हम सब निराश्रय हैं, हमारे आधार एक मात्र आप ही हैं। आप ही त्याग करेंगे तो हमारा कौन है ! हमारी रक्षा कौन करेगा ?

वशि०—पुत्री ! रक्षा करने वाला एक मात्र धर्म है। उसी धर्म मार्गसे डिगनेपर घोर अमंगल होगा, मैं धर्मके निमित्त ही यज्ञमें गमन करता हूँ, और धर्मकी रक्षामें तुम सबको छोड़ता हूँ।

(पराशरका वेगसे प्रवेश)

पराशर—(आते ही) दादा ! दादा !! किस कारण मुझे त्यागकर अग्रसर हो रहे हैं ? मैं पितृहीन हूँ। मैंने पिताका मुख भी नहीं देखा, इस अभागेके लिये एक मात्र आधार आप ही हैं। फिर ऐसी अवस्थामें आप यह लोक त्यागकर किस लिये प्रस्थान कर रहे हैं ? क्या इस अभागेका जन्म ही कुल नाशका कारण है ?

वशि०—पराशर ! पराशर !! क्यों इतने अधीर होते हो ! जिस धर्मके कारण तुमारे पिताने देह त्याग किया, जिस धर्मके कारण ब्राह्मणोंने जन्म ग्रहण किया है, उसी धर्मके कारण तुमारा पितामह अग्रसर होता है, तुम बालक हो। तथापि यज्ञ सूत्र धारी ब्राह्मण हो। कर्त्तव्य पालन करनेके स्थान

पर अधीर होना तुम्हें योग्य नहीं। कर्त्तव्यपथपर प्राण देना ब्राह्मणका आजीवन व्रत है।

पराशर—परन्तु दादा! विश्वामित्र बड़े कठोर हैं। क्या उनको शान्त करने वाला कोई नहीं? क्या ऐसे कुकर्मोंका दण्ड देने वाला कोई नहीं?

वशि०—वत्स! दण्ड देना मेरा कार्य नहीं, तुम प्रसन्नता पूर्वक मुझे विदा करो।

(सुनेत्रा वेगसे आती है)

सुनेत्रा—(हाथ जोड़कर) ब्रह्मर्षि! दासीपर करुणा कीजिये। चिर दुःखिनीको आश्रय प्रदान कीजिये। (चरण पकड़ बैठ जाती है)

वशि०—(सुनेत्राको उठाकर) कौन हो! देवी! तुम कौन हो?

सुनेत्रा—मैं कनौजाधिपति महर्षि विश्वामित्रकी पत्नी हूँ।

वशि०—परन्तु मेरे सम्मुख क्यों?

सुनेत्रा—पतिकी मंगल कामनाके लिये। रक्षा करो, भगवन्! रक्षा करो। मेरे स्वामीकी ब्रह्महत्यासे रक्षा करो। उनकी कठोर तपस्या विफल होती है। इसी कारण आपके शरणागत हुई हूँ। कृपाकर यज्ञमें उपस्थित न होइये।

वशि०—देवी! मैं प्रतिज्ञा कर चुका हूँ, मुझे मिथ्यावादी करनेका प्रयत्न न करो।

सुनेत्रा—नहीं नहीं, प्रभू मेरे स्वामीको ब्रह्महत्याके घोर पापसे बचाइये। (झोली फैलाकर) मुझे पति भिक्षा दीजिये।

वशि०—सती! तुमारे स्वामीका तपोबल उसका कुछ भी अमंगल

नहीं कर सकता। उस शक्तिशालीका अनिष्ट कोई नहीं कर सकता। उनके लिये वृथा चिन्ता न करो। वह अमर हैं, उनकी देह रक्षित हैं।

सुनेत्रा—जो हो, परन्तु मैं आपको कदापि यज्ञमें जाने न दूँगी। (पैर पकड़कर बैठ जाती है) यदि जानेका दृढ़ विचार ही है। तो पहले मुझे वधकर डालिये।

वशि०—(सुनेत्राको उठाकर) सती! तुम तनिक भी आशंका न करो। मैं आशीर्वाद देता हूँ, कि तुमारे पातिव्रत धर्मके प्रतापसे तुमारे स्वामीका अनिष्ट न होगा और वह जगत् पूज्य होंगे।

(आगे आगे वशिष्ठ और पीछे सुनेत्रा प्रस्थान करती है, पराशर, अरुन्धती

तथा अप्रश्यन्ति खड़े खडे आँसूबहाते हैं।)

अरुन्ध०—प्रभो! प्रभो!! स्वामीकी रक्षा करने वाले एक मात्र तुम्हीं हो। यदि मैंने आज पर्यन्त सत्य सेबाकी है तो मेरे स्वामीका एक बाल भी बांका न हो। पुत्री अप्रश्यंन्ति! चलो चलो सब मिलकर उनकी मंगल कामनाके लिये ईश्वरसे प्रार्थना करें। पुत्र पराशर! इन अबलाओंके आधार अब तुम्हीं हो। धैर्य धरो, धैर्य धरो। अब हमारा धर्म ही हमारी रक्षा करेगा। आओ आओ, सब मिलकर हरिसे प्रार्थना करें।

(गायन)

हम दुखियनके आप ही रक्षक हो रघुनाथ !
एक मात्र तुम ही प्रभू ! असहायोंके साथ ॥
निर अपराधी जीवनके बस तुम ही हो रखवाला प्रभू !
निर अपराध हुए हैं क्यों हम दुखियनके यह हाल प्रभू !
दुर्दिन हाय अकारन आया लिखा यही क्यों लाभ प्रभू !
कृपा करो करतार नहीं तो रखो कालके गाल प्रभू ॥

(सबका आँसू पोछते हुए प्रस्थान)

दृश्य छठा

—:※:—

(स्थान—यज्ञस्थल)

बीचमें होमकुण्ड है। पास ही आसन जमाकर विश्वामित्र बैठे हैं। उनके सम्मुख एक आसन खाली पड़ा है। एक ओर बहुतसे साधु तथा ब्राह्मण बैठे हैं। एक ओर देवताओंकी मण्डलीमें नारदमुनि बैठे हैं, नगरवासी ग्रामवासी स्त्री पुरुष ऋषि मुनिगण बैठे हैं। एक कोनेमें आनन्दी बैठा है।

विश्वा—(सबसे) सभी उपस्थित मान्यवरोंसे मेरा नम्र निवेदन है, कि यद्यपि लोक पितामहने मुझे ब्रह्मत्व प्रदान किया है, तथापि ब्रह्मर्षि वशिष्ठने यह कहकर मुझे अपमानित किया है कि मुझमें ब्राह्मणके लक्षणोंका अभाव है। यही कारण है, कि आज मैंने "वशिष्ठ-मारण यज्ञ" का आयोजन किया है, क्योंकि उन्होंने ब्रह्माजीके वाक्यकी

उपेक्षाकी है। उन्होंने भी मेरा पौरोहित्य स्वीकारकर यज्ञ सम्पूर्ण करनेका वचन दिया है। आज ही दोनोंकी परीक्षाका समय है। उनमें कितनी शक्ति है; कितना तेज है और उन्होंने किस कारण ब्रह्म वाक्य स्वीकार नहीं किया, यही आज देखना है।

१ ब्राह्मण—परन्तु महर्षि! ब्राह्मण-मारण यज्ञका आयोजन अनुचित है।

विश्वा०—मैं निश्चय ही उनके मारणका अनुष्ठान करूँगा यदि वह यज्ञ-स्थलमें प्रवेश न करेंगे। यह मैं सबके सम्मुख प्रकट कर देता हूँ। यदि वह न उपस्थित हुए तो उनको संसार मिथ्यावादी कहेगा।

(वशिष्ठ तथा सुनेत्राका प्रवेश)

वशिष्ठ—(आते ही) ब्राह्मण कदापि असत्यवादी नहीं हो सकता। मैं तुमारा यज्ञ सम्पूर्ण करनेके लिये उपस्थित हूँ। होमानल प्रज्वलित करो। मैं तुम्हारा कार्य सिद्ध करूँगा।

नारद—वशिष्ठ! वशिष्ठ!! इस प्रकार उन्मत्त न हो। विश्वामित्रके संग सद्भाव रखो। आप लोक पितामहका वाक्य उल्लंघन न करिये।

वशिष्ठ—मैं ब्रह्माजीके वरदानको असत्य नहीं करता। बल्कि शास्त्र मर्यादाकी रक्षा कर रहा हूँ।

विश्वा—परन्तु यह मारणयज्ञ तुमारे ही लिये हैं, यह तो स्मरण है न?

वशिष्ठ—मैं कर्त्तव्य परायण हूँ और इस यज्ञको सम्पूर्ण करनेके लिये ही उपस्थित हुआ हूँ। (आसनपर बैठ जाते हैं)

विश्वा—(स्वतः) यह ब्राह्मण उन्माद ग्रस्त है, पर आश्चर्यका विषय है कि अपने ही मारण यज्ञ स्थलमें यह किस साहसके बलपर उपस्थित हुआ ?

वशिष्ठ—विश्वामित्र ! क्या चिन्ता कर रहे हो ? होमानल प्रज्वलित करो।

विश्वा—क्या तुम मुझे ब्राह्मण स्वीकार न करोगे ?

वशिष्ठ—मैं ब्राह्मण होकर शास्त्र नियम कदापि भंग न करूंगा। बृथा विवादका कोई कारण नहीं। यज्ञ आरम्भ होना उचित है।

(सब ब्राह्मण उठकर खड़े होजाते हैं)

१ ब्राह्मण—चलो चलो, यहां ब्रह्महत्या देखनेके लिये कौन उपस्थित रहेगा ?

वशिष्ठ—ब्राह्मणगण ! मैं प्रार्थना करता हूँ, कि आप लोगोंने ही मुझे ब्राह्मण समाजका नेता स्वीकार किया है। इस कारण मेरा अनुरोध है, कि आप अब यहांसे प्रस्थान न करें, आप लोगोंके आशीर्वादसे ब्राह्मणका मान अवश्य रहेगा, बैठो, सब मिलकर ब्राह्मण प्रतिज्ञाकी रक्षा करें।

विश्वा—(स्वतः) यह क्या चमत्कार है ! अपनी मृत्युके लिये हर्ष पूर्वक अग्रसर हो रहा है ! प्राणको तृणवत समझकर खो रहा है ! इस ब्राह्मणमें कौनसा मुख्य तेज छिपा हुआ

है जिसके बलसे तिल मात्र भी विचलित नहीं होता! यदि इसी क्षमा शीलताका नाम ब्रह्मत्व है तो वास्तवमें यह एक अद्भुत चमत्कार है। आश्चर्य! महाआश्चर्य! यह ब्राह्मण मृत्यु मुखमें होकर भी उत्साह पूर्ण बैठा है!

वशिष्ठ—विश्वामित्र! आहुति प्रदान करता हूँ :—

(विश्वामित्र यज्ञ कुण्डमें जल छींटता है, अग्नि प्रज्वलित होती है)

वशिष्ठ—(आहुति लेकर) हे सर्वभुक! मेरे यजमानकी मनोवाञ्छा पूर्ण करो, ब्रह्म वाक्यकी रक्षा करो, वशिष्ठ हत स्वाहा :—

(वशिष्ठ एक आहुति देकर दूसरी उठाते हैं)

विश्वा—वशिष्ठ! स्थिर हो। (स्वतः) उन्मादका लक्षण इससे अधिक और क्या हो सकता है! जो निज बधके लिये उद्यत है। क्या बल है! कितना उत्साह है! कैसा तेज है! होमाग्निके सदृश तेजोमयी ज्योति है, परन्तु उन्मत्त होकर स्वयं अनुचित कर रहा है। इसे अहितका कुछ भी ज्ञान नहीं रहा है!

वशिष्ठ—विश्वामित्र! जब मैं स्वयं तुमारा यज्ञ सम्पूर्ण कर रहा हूँ तो फिर चिन्ता क्या कर रहे हो? मुझे किस कारण बिलम्ब करनेको कह रहे हो?

विश्वा—कुछ नहीं, अब रक्षा नहीं। जब तुम इस प्रकार उन्मत्त हो ब्रह्माका वाक्य नहीं मानते तो मैं निर्दोष हूँ। हाँ, आहुति प्रदान करो।

वशिष्ठ—(आहुति लेकर) वशिष्ठ हत स्वाहा । (आहुति देता है)

विश्वा—(स्वतः) आह ! क्या उन्माद ! कैसा अभिमान ! कुछ भी स्थिर नहीं कर सकता । जो हो, एक बार फिर सावधान करदूँ । (प्रकट) देखो, अब भी समझ सोंच लो, मैं सत्य ही कह रहा हूँ कि ब्रह्माने मेरा ब्रह्मत्व स्वीकार किया है । तुम अविश्वास न करो । सोंचलो, फिर भी सोंचलो । यह अन्तिम आहुति देते ही तुमारा मस्तक होमकुण्डका ग्रास होगा ।

वशिष्ठ—कुछ कहनेका प्रयोजन नहीं । मैंने यज्ञ सम्पूर्ण करनेका बचन दिया है । सो अवश्य करना होगा । अब हित अनहित उचित अनुचितका सोंच विचार वृथा है । यही अन्तिम तृतीय आहुति देता हूँ । तुमारा यज्ञ सम्पूर्ण होगा ।

(वशिष्ठ तीसरो आहुतिँ उठाते हैं)

विश्वा—(रोककर) ठहरो, ठहरो । (स्वतः) यह मैं क्या देख रहा हूँ । इस ब्राह्मणका हृदय सुमेरूके सामान दृढ़ है ! यह किस शक्तिका प्रभाव है ! कैसा आत्मत्याग है ! (चौंककर) बस, बस, मुझमें इसी शक्तिका अभाव है । मैं बार बार यही देख रहा हूँ, कि मैं ही अभिमानी हूँ । मुझमें जो त्रुटि है वह मेरा हृदय स्वयं प्रकाश कर रहा है । मैं क्षमाहीन और कठोर हृदय हूँ, इतने तप करने पर भी मेरा तम दूर न हुआ, एक बार अप्सराओंको अभिशाप देकर आया तो दूसरी बार ब्रह्महत्यापर उद्यत हूँ,

धिक्कार है मेरी तपस्यापर! धिक्कार हैं मेरे ब्रह्मर्षित्वपर। और शत बार धिक्कार है मेरी ब्रह्मर्षित्व लाभकी आकाँक्षापर। उस क्रोधने मेरा मान अभिमान भंगकर दिया, इस ब्राह्मणके महत्व जाननेके योग्य मैं कदापि नहीं हो सकता। (वशिष्ठसे) क्षमा करो, ब्रह्मर्षि! क्षमा करो। अब आहुति प्रदान न करो।

वशिष्ठ—ऐसा नहीं हो सकता, मेरी आहुति निष्फल न जायगी। अब वाधा न दो।

विश्वा—अच्छा तो मुझे आशीर्वाद दो और मेरे मारण हेतु तृतीय आहुति प्रदान करो। मेरे कुकर्मोका प्रायश्चित होगा। इस अधमको क्षमा न करो, मैं तुमारा माहात्म्य नहीं जानता था। यज्ञ सूत्रधारी ब्राह्मण! आप देवताओंके भी देवता हो, मैं महा अज्ञान हूँ नीच हूं। बस, मेरा मस्तक खण्ड खण्ड करनेके लिये आहुति प्रदान करो। यही मेरा प्रायश्चित्त है।

वशिष्ठ—परन्तु मैं तुमारा पुरोहित हूँ और यह यज्ञानल मेरे हेतु है। मैं उलटा कार्य नहीं कर सकता।

विश्वा—अच्छा तो पाप यज्ञानल प्रज्वलित हो।

(एक ओर अग्नि उत्पन्न होती है)

विश्वा—वशिष्ठ देव! मैं ब्रह्माजीका वरदान प्राप्त कर भी ब्रह्मत्व लाभ न कर सका, तुमारी कृपासे आज मैंने शिक्षा पाई

है, मैं महा क्रोधी और अभिमानी हूँ, इस दावानलमें मुझे अपनी आहुति देनेकी शिक्षा दीजिये।

वशिष्ठ—महात्मा विश्वामित्र! तुम परम मार्जनाशील हो। संसार तुमसे मार्जनाकी शिक्षा ग्रहण करेगा। हे ब्रह्मर्षि! मेरा नमस्कार ग्रहण करो।

विश्वा—(आश्चर्यसे) नमस्कार! क्या तुमने मेरा ब्रह्मत्व स्वीकार कर लिया?

वशिष्ठ—अवश्य स्वीकार करूँगा। अब तुम परम तितिक्षाशील ब्राह्मण होगये। अब अवश्य स्वीकार करूँगा। देखो, तुम्हीं देखो, इस समय तुम्हारे मुख-मँडलकी ज्योति स्वयं तुम्हारे ब्रह्मतेजकी साक्षी दे रही है। तुमने ब्रह्मत्व प्राप्त करनेके लिये कठोर तपस्या की है, तुम राजर्षि, महर्षि और ब्रह्मर्षि हो। तुमको मेरा नमस्कार है! (हाथ जोड़ते हैं)

विश्वा—आप मेरे गुरू हैं, आपकी ही शिक्षा द्वारा आज मैं धन्य हुआ। मैं आज पर्यन्त इस विषयसे अनभिज्ञ था, कि क्षमाशीलता, दया तथा अभिमान-वर्ज्जना ही ब्रह्मत्व है।" परन्तु आपकी कृपासे आज मैं वह पवित्र माहात्म जान गया। कृपाकर चरण-रज प्रदान कीजिये।

(विश्वामित्र वशिष्ठकी चरणरज लेकर नेत्रोंमें लगाते हैं।)

वशिष्ठ—विश्वामित्र! तुम मेरे सखा हुए। आओ, आओ, एकबार मुझे आलिङ्गन करो।

(दोनों गले मिलते हैं। जय-ध्वनि होती है। आकाश मार्गसे पुष्प वृष्टि होती है)·

(ब्रह्मण्य देवका प्रवेश)

बिश्वा—विश्वामित्र ! मुझे पहचानते हो ?

विश्वा—(ध्यान करके) प्रभो ! पहचान गया :—

नमो ब्रह्मण्य देवाय, गो-ब्राह्मण हिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

ब्रह्मण्य देव—कल्याण हो, कल्याण हो :—

(बेदमाताका प्रवेश)

वेद माता—(आते ही) विश्वामित्र ! यह यज्ञ-सूत्र धारण करो ।

(वेदमाता यज्ञोपवीत गलेमें पहना देती हैं)

विश्वा—(हाथ जोड़कर) धन्य हो विश्वजननी ! धन्य हो । अहा ! आज मैं धन्य हुआ ।

ब्रह्मण्य—विश्वामित्र ! तुमने संसारको तपोबलका प्रभाव प्रत्यक्ष दिखा दिया । तुम्हारी कठोर तपस्याके पुण्य-प्रतापसे और सती सुनेत्राके पातिव्रत धर्मके प्रभावसे तुम अस-म्भवको भी सम्भव करनेके योग्य हो ।

वेद माता—महर्षि ! यह तुम्हारे तपोबलका ही प्रभाव है, कि मैंने तुम्हें पुत्र स्वीकार किया । अब यह ब्रह्मण्य देव तुम्हारे हृदयमें वास करेंगे । तुम्हारा जप तप पुण्य पूर्ण हुआ ।

(ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र आदि देवताओंका प्रकट होकर दोनोंको आशीर्वाद देना ।

दृश्य-सातवाँ।

(स्थान—बन मार्ग)

(आनन्दीका हँसते हुए प्रवेश)

——:*:——

आनन्दी—(आते ही) हाः हाः हाः हाः ! पूरी, कचौरी, लड्डू, पेड़े, जलेबी, इमरतीके वृक्ष लग जायँगे, मेरे भगवान "तस्मई" (दूधकी ज़ोर) का मेंह बरसायँगे। बस, जहाँ मैंने उलटे होकर तपस्या करनी आरम्भ की तहाँ पहले तो इन्द्रमहाराज मेनकाको हाथ पाँव जोड़कर मनायँगे, फिर मेरी तपस्या भंग करनेके उपायमें लग जायँगे। (सोंचकर) परन्तु क्या उस समय मनको स्थिर रख सकूँगा ? (ठहरकर) नहीं, नहीं, जब ब्रह्मर्षि पिघल गये; तो मैं कैसे काम-रूपिणी कामिनीके सम्मुख स्थिर रह सकूँगा ! (सोंचकर) ऊँह, तो क्या हुआ ! मैं उसे ऐसी पट्टी पढ़ाऊँगा, कि वह शीघ्र ही चुल्लू भर पानीमें लज्जासे डूब मरेगी। क्योंकि वह मेरे स्वामीकी पत्नी है, बस बस यह मसाला ठीक है। हाँ, अब तपस्यामें लगजाना चाहिये।

(उलटा होकर, समाधि लगाकर आँखें बन्दकर लेता है, इसी समय महाराज त्रिशंकूके यज्ञमें आई हुई पुरनारियाँ गाती हुई प्रवेश करती हैं।)

(गायन)

आओ सखी ! मिल देखें, शोभा बनकी ।
तब प्यास मिटे अँखियनकी ॥
हरियाली छाई सखी ! शीतल पवन सुहाय ।
देख छटा चहुं ओर की, जियरा सखो लुभाय ॥
उठे विरह पीर सखियनकी ॥ आओ सखी० ॥

(गायन समाप्त होता है । सहसा उनकी निगाह आनन्दीपर पड़ती है और वह सब आश्चर्यसे देखती हैं । आनन्दी आँखें खोलकर देखता है और सीधा होकर खड़ा हो जाता है ।)

आनन्दी—(स्वतः) कहा न था, कि तपस्या करते ही इन्द्र देवको पिलपिली पड़ जायगी । मैं तो समझता था एक आयगी, परन्तु यहाँ तो टोकरा भरकर आ गयीं ।

१ पुरनारी—महाराज ! आप उलटे होकर क्या कर रहे थे ?

आनन्दी—पहले यह बताओ, कि तुम सब इन्द्रपुरी खाली करके यहाँ क्यों चली आयीं ! क्या मेरी तपस्या भंग एकसे न होती जो तुम कतार बाँधकर आ पहुँचीं !

२ पुर०—(हाथ जोड़कर) महाराज ! क्षमा करिये, हम नहीं जानती थीं, कि आप यहां तपस्या कर रहे हैं । हम सब तो नवीन-इन्द्रपुरीकी शोभा देखकर अब बन भ्रमण करने आयी हैं ।

आनन्दी—(बिगड़कर) क्या तुम सबको इन्द्रने मेरी तपस्या भंग करनेको नहीं भेजा ! जो मेरे सम्मुख चरित्र करती हो !

३ पुर० --नहीं महाराज ! हमको तो उन्होंने कुछ नहीं कहा और वह अपनी प्रजाको क्यों कुछ कहेंगे !

आनन्दी—समझ गया, समझ गया। अच्छा, अब शीघ्र यहांसे चली जाओ। नहीं तो अपने स्वामी विश्वामित्रकी तरह तुम सबको शाप देकर पाषाण बना दूँगा।

(सब भयभीत होती हैं)

४ पुर० —अच्छा, हम चली जातीं हैं, क्षमा करिये।

(सबका जाना—आनन्दीका हँसना)

आनन्दी--वाहरे मैं ! और वाहरे मेरी तपस्या ! देखा ! इन्द्र महाराजकी कुछ भी न चली। बस, अब मैंने भी मैदान मार लिया, इस बारकी तपस्यामें श्री विष्णु भगवान दौड़े आयँगे और बरदान देनेके लिये प्रस्तुत हो जायँगे। बस अब विलम्ब करनेकी आवश्यकता नहीं।

(आनन्दी पुनः उलटा टँगकर आँखें बन्द कर लेता है, इसी समय दो ब्राह्मण कुछ भोजनकी सामग्री और मोढ़ेपर एक लोटा डोरी लटकाये प्रवेश करते हैं और आनन्दीको देखकर आश्चर्य करते हैं।)

१ ब्रा०--(दूसरेसे) क्यों भाई ! यह उलटा कौन लटक रहा है ?

२ ब्रा०—(ध्यानसे देखता हुआ) समझ गया। यह तो ब्रह्मर्षि विश्वामित्रका चेला आनन्दी है। जान पड़ता है, यह ध्यानमें मग्न है। मुझे नहीं ज्ञात था, कि यह भी तपस्वी है।

१ ब्रा०—अरे यह तो महा लालची है, जहां कहीं ब्राह्मण भोजन इत्यादिका अवसर आता है वहीं यह सबके प्रथम ही जा पहुँच जाता है और जब पत्तलपर बैठता है तो दो चार सेरकी कौन कहे १०।१५ सेर मिठाई उड़ा जाता है। यह तपस्या नहीं इसका ढोंग है। अपने आपको महान तपस्वी बताया करता है।

२ ब्रा०—ढोंग है? तो इसकी परीक्षा लेनी चाहिये। फिर कभी सम्मुख न बोलेगा।

१ ब्रा०—इसका तो सहज ही उपाय है। कुछ भोजनकी सामग्री यहां रखकर छिप जाओ। फिर देखो अभी इसकी तपस्या भंग होगी और चट्ट ही भोजन पर हाथ मारेगा।

२ ब्रा०—बात तो ठीक है।

(दोनो ब्राह्मण कुछ मिठाई और पूरी इत्यादि आनन्दीके समीप रखकर छिप जाते हैं। आहट पाकर आनन्दी सीधा होकर बैठ जाता है और खानेकी सामग्री देखकर एकबार जोरसे हँसने लगता है।)

आनन्दी—हाः हाः हाः हाः! भगवान मेरे सम्मुख स्वयं नहीं आये, परन्तु भोजन रखकर चल दिये। (हँसकर) जो हो, तपस्या में तो मैं गुरूजीसे भी तीन हाथ आगे बढ़ गया, उन्होंने बड़ी कठिनतासे ऐसा पद पाया, परन्तु मेरे तो तपस्या में अग्रसर होते ही भोजन चला आया। बस अब क्या है? जहां मैंने ध्यान लगाया, तहाँ चट्टही पेटभर भोजन

चला आयेगा। (सामग्री देखकर) ह ! इतने भोजनसे क्या होगा ? इतना तो पेटभरने पर भी चाट जाता हूँ क्या भगवानको यह भी ज्ञात नहीं, कि मैं कितना खाता हूँ ! (सोचकर) बस एक बार फिर ध्यान लगाऊँ और भोजनकी मात्रा बढ़ाऊँ। (उलटा होकर आखें बन्द कर लेता है)

१ ब्रा०—(दूसरेसे) क्यों, देखा इसका ढोंग ? मूर्ख समझता है, कि भगवान आकर भोजन रख गये।

२ ब्रा०—मेरे विचारमें अब यह सामग्री उठाकर छिप जायँ।

१ ब्रा०—हाँ हाँ, यही करो, तनिक आनन्द आयगा।

(दोनों ब्राह्मण वह सामग्री उठा कर छिप जाते हैं। आनन्दी आखें खोलकर देखता है और फिर सीधा होकर आश्चर्य करता है।)

आनन्दी—(स्वतः) हैं ! यह क्या !! भगवान रुष्ट होकर वह भोजन भी लेगये ? हाय हाय ! यह तो बुरा हुआ :—

टेका मस्तक भूमिपर, टाँगें करीं उतान।
लालचवश दोनों गये, भोजन अरु भगवान ॥

(दोनों ब्राह्मणोंका सम्मुख आना)

१ ब्रा०—नमस्कार मिश्रजी ! नमस्कार।

आनन्दी—नमस्कार, नमस्कार, कहिये, कहिये !! इधर कहाँ ?

२ ब्रा०—आज महाराज त्रिशंकुके यहां ब्राह्मण भोजन था, वहांसे भोजन कर निवृत्त हुए तो तनिक वन-भ्रमण करते करते इधर आनिकले।

आनन्दी—क्या कहा! क्या कहा!! आज वहां भोजनका सुअवसर था? तो भाई मुझे भी क्यों न बुलाया?

१ ब्रा०—आप तो तपस्या कर रहे थे, बुलाता किसको?

आनन्दी—हाय हाय! तपस्याने तो आज भूखा ही मार डाला। यदि आज तपस्या न करता तो वहाँ जाकर पेट तो भरता!

२ ब्रा०—मिश्रजी! आपको भोजनकी क्या कमी है! आपको तो भोजन कराने भगवान आयँगे।

आनन्दी—क्या कहूँ एक बार तो भोजन आया; परन्तु लोभके मारे मैंने वह भी गँवाया, अब भूखा रहकर तपस्यामें कैसे ध्यान लगाऊँ? रूठे हुए भगवानको मनाऊँ, तब कहीं ठिकाना लगे।

१ ब्रा०—और उपाय ही क्या है! भला यह तो बताइये, आपने कैसे जाना, कि भगवान ही भोजन लाये थे? क्या प्रमाण है, कि प्रभू प्रसन्न होकर स्वयं आये थे?

आनन्दी—प्रमाण ही बता दूँगा तो तुम भी तपस्या कर भोजनका ठिकाना कर लोगे। जब तुम सबने भोजनके समय मुझे न बुलाया तो मैं क्यों बताऊँ तपस्याकी माया!

२ ब्रा०—अजी बैठो, बड़े तपस्या करनेवाले। तुमारा क्या सामर्थ्य, कि तुम तपस्या करो।

आनन्दी--सामर्थ्य न होता तो एक बार भोजन कहांसे आजाता! इन्द्रकी अप्सराओंको कैसे भगाता?

१ ग्रा०--क्या तुमारे पास अप्सरायें आयी थीं?

आनन्दी—अजी, एक क्या पांच सात आयी थीं; परन्तु मेरी डपट सुनकर ही भाग गयीं।

२ ग्रा०—तब तो भाई! आप बड़े सामर्थ्यवान हैं। अच्छा, एकबार हमें भी अपनी तपस्याका बल दिखाइये। भोजन मँगवाइये।

आनन्दी--हुँहँ! क्या तपस्या सबके सामनेकी जाती है! नहीं नहीं, यह तो एकान्तका काम है।

१ ग्रा०--तो बस समझ गया, कि यह सब तुमारा ढोंग है।

आनन्दी—ढोंग है तो वही सही। तुम्हें क्या! जाइये, पधारिये, मेरी तपस्यामें बाधा न पहुँचाइये।

२ ग्रा०—अच्छा हम चले जाते हैं! परन्तु फिर हमारे सम्मुख कभी अभिमान न दिखाना। देख लिया तुमारा सब बहाना।

(दोनों जाकर फिर छिप रहते हैं)

आनन्दी (स्वतः) अब क्या करूँ? उधरका भोजन गँवाया, इधर पाया हुआ गँवाया। क्या अब भगवान प्रसन्न होंगे? (सोंचकर) क्यों नहीं होंगे? किस कारण नहीं होंगे? बस मैं फिर तपस्या करूँगा और बरदानके भोजनसे पेट भरूंगा।

(आनन्दीका फिर वैसी ही तपस्या करना)

१ ग्रा०-- (दूसरेसे) क्यों ! अब क्या विचार है ?

२ ग्रा०--मेरे विचारमें-यदि आनन्द देखना है; तो इस वृक्षपर चढ़ कर, कुछ भोजनकी सामग्री इसी रस्सीमें बाँधकर लटकाये बैठे रहो, जब यह देखकर प्रसन्न हो और लेनेके लिये हाथ बढ़ाये तो तुम रस्सीको ऊपर खींच लिया करो, दस बीस बार वह हाथ बढ़ायगा और अन्तमें हताश होकर बैठ जायगा, उस समय बड़ा आनन्द आयगा।

१ ग्रा०--ठीक है, ठीक है, परन्तु भोजनके स्थानपर कुछ और रखेंगे, आओ मैं बताऊँ।

(दोनों चले जाते हैं। इसी समय ऊपरसे रस्सीमें बँधी एक कपड़ेकी गठरी लटकती दिखायी देती है। आनन्दी आंखें खोलता है और गठरी देखते ही सीधा खड़ा होकर खिलखिलाता हुआ हँस पड़ता है।)

आनन्दी--(स्वतः) वाहरे मेरे भगवान! तुम हो बड़े ही दया वान, मेरा भोजन आकाश मार्गसे रस्सीमें बाँधकर लटकायो। वाहरे तुमारी माया!

आनन्दी हाथ ऊंचाकर गठरी लेना चाहता हैं। वह ऊपर उठती जाती है, आनन्दी उछलकर पकड़ना चाहता है वह और भी ऊपर उठ जाती है। इसी प्रकार दस बीस बार आनन्दी उछल उछलकर गठरी पकड़नेकी चेष्टा करता है। अन्तमें हताश होकर पृथ्वीपर बैठकर जोर जोरसे स्वाँस भरता है और ऊपरकी ओर ताका करता है।)

आनन्दी--अच्छा भगवान ! और सताओ, मत खिलाओ, परन्तु मैं भी तुमसे भोजन लेकर छोड़ूँगा, कुशल इसीमें है, कि गठरी नीचे कर दो ।

गठरी फिर नीचे होती है । आनन्दी उछलकर पकड़ना चाहता है, दो तीन बारकी चेष्टामें गठरीका कपड़ा आनन्दीके हाथसे खिंचकर फट जाता है और गठरीमें भरी हुई मिट्टी सब आनन्दीके मुँह सरपर पड़ती है और वह झाड़ने लगता है। इसी समय दोनों ब्राह्मण सम्मुख होकर हँसने लगते हैं ।

१ ब्रा०—क्यों मिश्रजी ! कैसा भोजन पाया ?

आनन्दी—समझ गया, यह सब तुमारी ही दुष्टता है । (क्रोध भरी दृष्टिसे देखता है)

२ ब्रा०—(हँसता हुआ) क्यों, अब तो हमारे सामने तपस्याका ढोंग न दिखाओगे ?

आनन्दी—(क्रोधसे) जाओगे या दो चार लात घूसे खाओगे । ठहर जाओ, ठहर जाओ ।

(ब्राह्मण आगे आगे भागते हैं । आनन्दी पीछे पीछे लपककर जाता है)

———

दृश्य आठवाँ।

(स्थान—वशिष्ठाश्रम)

(बीचमें कामधेनु खड़ी है, जिसके सम्मुख अरुन्धती हाथ जोड़े बैठी हैं और सब ईश्वरसे प्रार्थना कर रही हैं।)

(गायन)

दुःख टारो प्रभू ! दुःख टारो।
सुख सन्तान सभी मम खोयो, अब तो अन्त सँवारो।
मारण यज्ञ राज ऋषि कीन्हा, दया दृष्टि अब डारो॥
दुःख टारो प्रभू ! दुःख टारो॥
रक्षा करो नाथ अबलाकी, पति बिन जग अँधियारो।
जो न तज्यो तव नाम निरन्तर, तेहिं न मृत्यु बिन मारो॥
दुःख टारो प्रभू ! दुःख टारो॥

अरुं०- हे जगदीश्वर ! क्रोधी विश्वामित्रके मारण यज्ञमें मेरे स्वामीकी रक्षा करने वाले एक मात्र तुम्हीं हो।

(एक साधुका प्रवेश)

साधु—(आते ही) माता अरुन्धती ! हर्ष मनाओ, मंगल गाओ।

अरुं०—वत्स ! क्या शुभ समाचार है ? शीघ्र सुनाओ !

साधु०—यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ, भगवान वशिष्ठने विश्वामित्रको ब्रह्मर्षि स्वीकारकर परस्पर मित्रता धारण की है और इसीके उपलक्ष्यमें दोनों मित्र अनेक ऋषि मुनि तथा ब्राह्मणों सहित कामधेनुका पूजन करनेके लिये आ रहे हैं। ब्रह्मर्षिने पूजनकी सामग्री एकत्रित करनेकी आज्ञा दी है।

अरुं०—(उठकर) धन्य हो, परमात्मा धन्य हो! आज तुम्हारे ही आशीर्वादसे मेरी कामना पूर्ण हुई। धन्य हो परमात्मा! तुम धन्य हो, तुम्हारी माया धन्य है।

अरुन्धतीका आश्रममें जाना, इसी समय विश्वामित्र सुनेत्रा, आनन्दी वशिष्ठ तथा अनेक साधु ऋषि मुनि और ब्राह्मणोंका आकर कामधेनुके आगे सर झुकाना।)

विश्वा०—मातेश्वरी! मैंने तुम्हारी अमोघ शक्ति और अद्भुत मायाको नहीं जाना, अभिमानवश तुम्हारे सामर्थ्यको नहीं पहचाना, आज ब्रह्मर्षि वशिष्ठके उपदेशों द्वारा मेरे नेत्रों पर पड़ा हुआ पर्दा उठ गया, अज्ञानान्धकार छूट गया, क्षमा करो, माता! मुझे क्षमा करो।

कामधेनु—वत्स! इसमें दोष तुम्हारा नहीं, यह सब परमात्माकी लीला थी। यदि आज तुम क्रोध और अभिमानके वशीभूत न होते तो यह उच्च पद प्राप्त करनेमें भी समर्थ न होते, तुम परम धार्म्मिक, दृढ़ संकल्पी, सत्य प्रतिज्ञ, ज्ञानवान तथा कर्त्तव्यकी मूर्त्ति हो। तुम संसारको तपोबलका प्रभाव दिखानेके लिये ही उत्पन्न हुए हो, तुम्हें अपनी अपूर्व शक्तिसे संसारका उपकार करना है, तपोबलका प्रचार करना है। तुम धन्य हो, ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जैसे ऋषि-श्रेष्ठ तुमारे परम मित्र हुए। यह संसारोन्नतिका प्रधान कारण है।

वशि०—माता! आपकी ही कृपासे मेरी मान-रक्षा हुई, आपके

ही प्रतापसे और आप की ही प्रेरणासे महात्मा विश्वा-मित्र सर्वोच्च पद प्राप्तकर मेरे मित्र हुए।

(सब—"बोलो गोमाताकी जय" ध्वनि करते हैं)

(अरुन्धती पूजनकी थाली लेकर प्रवेश करती है और थाली द्वारपर रखकर वशिष्ठ मुनिके चरणोंपर गिर पड़ती है। वशिष्ठ उसे उठकर गले लगाते हैं।

अरु०—अहोभाग्य ! अहोभाग्य, स्वामी ! आपके दर्शन और इस हर्ष-युक्त मिलनके अपूर्व समयने आज मेरे सर्व दुःखोंका नाश कर दिया।

विश्वा०—धन्य हो सती अरुन्धती ! तुम धन्य हो। तुमने स्वामी सेवाका महत्व दिखाकर संसारको बता दिया है, कि सती स्त्रियोंका सामर्थ्य महान है।

अरु०—ब्रह्मर्षि ! इस प्रशंसाकी पात्री एक मात्र देवी सुनेत्रा है, जिसने अपने सतीत्व-बलसे पातिव्रत धर्मको उज्वल कर दिया। आओ बहन सुनेत्रा, मेरे गलेसे लग जाओ।

(सुनेत्रा तथा अरुन्धतीका मिलन)

सुनेत्रा०—देवी! मुझमें ऐसा कौन सा सामर्थ्य है जो इतना सम्मान कर रही हो- यह सब उपमा आपकी है।

वशि०—देवो सुनेत्रा ! तुम्हारे आदर्शको बखान करनेवाली संसारकी सती नारियां भवसागरसे पार हो जायँगी। जबतक पृथ्वी रहेगी, तबतक तुमारी अपूर्व कथाका बखान होगा, तुम्हारा गुण गान होगा।

विश्वा०—ब्रह्मर्षि ! आपका आशीर्वाद पाकर हम धन्य हुए।

(नारद मुनिका प्रवेश, सबका प्रणाम करना)

नारद—मंगल हो, कल्याण हो। विश्वामित्रजी! महात्मा वशिष्ठका अशीर्वाद वास्तवमें मंगलमय है। धन्य हो ब्रह्मर्षि। वशिष्ठजी! आप धन्य हो, आपकी क्षमा शक्ति धन्य है, आपकी धर्म्म दृढ़ता धन्य है।

विश्वा०—देवर्षि! आप सत्य कहते हैं, इन्हींका आदेश मेरे लिये गौरवका कारण है। इन्हींका उपदेश मेरी मंगल कामनाका पथ-प्रदर्शक हैं, इन्हींकी धर्म दृढ़ता मेरी यशपताका है।

वशि०—नहीं, नहीं, ब्रह्मर्षि! आपकी शक्ति महान है, आप जैसे तेजस्वीको मित्र रूपमें प्राप्त कर मुझे अभिमान है :—

आपके वश शक्ति है, संसारके उद्धारकी।
त्याग सुख सम्पत्तिको, तप जपकी सीमा पारकी॥

नारद—(मुसकराकर) आप दोनों सज्जन परस्पर एक दूसरेकी बड़ायी कर रहे हैं परन्तु जिस हेतु आगमन हुआ वह भी करना उचित है। आइये सब मिलकर माता कामधेनुका पूजन कर हर्ष मनायें, हरि गुण गायें।

(सब मिलकर कामधेनुका पूजन करते हैं)

(मंगल गायन)

शुभ अवसर आज मनावो। सब हिल मिल हरि गुण गावो॥

ड्रापसीन

[समाप्त]